कवि-श्री माला

❋ असमिया ❋

कवि :

रघुनाथ चौधुरी

सम्पादक-अनुवादक

परेश चन्द्र शर्मा

और

लोकनाथ भराली



राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

प्रकाशक
मोहनलाल भट्ट
मन्त्री
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
हिन्दीनगर, वर्धा
● ● ●

प्रथम संस्करण—१०००
मई १९६२
मूल्य—रु २/-
● ● ●

मुद्रक
मोहनलाल भट्ट
राष्ट्रभाषा प्रेस
हिन्दीनगर, वर्धा
● ● ●

आमुख

हर्षका विषय है कि राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति वर्धा अपने कार्य कालके २५ वर्ष सन् १९६१ में पूरे कर रही है। इस उपलक्ष्यमें मनाये जानेवाले रजत-जयन्ती महोत्सवके अवसरपर सभी भारतीय भाषाओंके मान्य कवियोंका तथा उनके उत्कृष्ट काव्यका परिचय 'कवि-श्री माला' की पच्चीस पुस्तकोंमें हिन्दी-गद्यानुवाद सहित प्रकाशित करनेकी योजनाके अन्तर्गत प्रस्तुत ग्रन्थ पाठकोंके समक्ष आ रहा है।

यद्यपि किसी भी भाषाके सर्वश्रेष्ठ काव्य-सर्जकका निश्चय करना एक कठिन कार्य है फिर भी अपनी सीमाओंको ध्यानमें रखते हुए गण्यमान्य उन उन भाषाओंके विद्वानोंकी रायसे ही चुनावका कार्य सम्पन्न किया गया है।

प्रत्येक पुस्तकके आरम्भमें जिस भाषाके कवियोंकी रचनाओंका चयन किया गया है उस भाषाके साहित्यका परिचय और कवि विशेषका परिचय दिया गया है। जिस भाषाके कवियोंका चुनाव किया गया है उनका चुनाव करते समय सन् १९०० से पूर्वका साहित्य और १९२० से बादका साहित्य—इस तरहकी एक विभाजन-रेखा ध्यानमें रखी गई है। इसका कारण यह है कि लगभग सन् १९२ के पूर्वके तथा १९२ के बादके साहित्यमें प्रवाहित विचार-धारामें एक विशेष प्रकारका अलगाव-सा पाया जाता है।

प्रस्तुत संग्रहमें संकलित साहित्य-परिचयको श्री ए. कन्नपजी मराठीने तैयार किया है। श्री परेश चन्द्र अर्जुन पुस्तकमें कवि-परिचय और काव्यांशको सम्पादित तथा अनुवादित कर सारी सामग्रीको इस रूपमें प्रस्तुत करनेमें सहयोग दिया है। संग्रहकी आवरण डिजाइनको बनवा देनेमें श्री वही एन. आचरेकरजी (डीन सर जे. जे. इन्स्टीट्यूट ऑफ अप्लाईड आर्ट, बम्बई) का उदार सहयोग मिला है उसके लिए समिति उनकी आभारी है।

इसके अतिरिक्त प्रचार तथा अन्यान्य दृष्टियोंसे भिन्न-भिन्नका प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सहयोग मिला है, उ के प्रति भी समिति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती है।

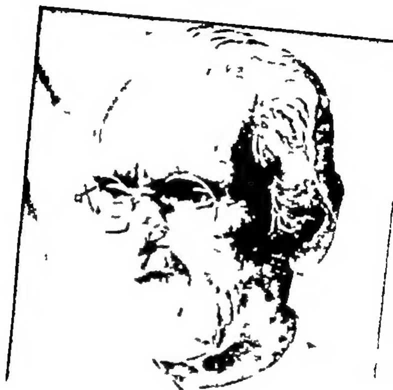
आशा है प्रस्तुत संग्रह पाठकोंको रुचिकर एवं उपयोगी प्रतीत होगा।

मन्त्री

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

अनुक्रमणिका

कवि-श्री माला
असमिया



रघुनाथ चौधुरी

असमिया साहित्य परिचय

(प्रारम्भसे १९२० तक)

असमिया भाषा
और
उसका साहित्य

• • •

भाषा साहित्यकी पूर्व पीठिका

प्राचीन मनुष्यका जीवन आधुनिक जीवनकी तुलनामें न तो उतना जटिल था और न उदरपोषणके लिए उस आवश्यक वस्तु प्रकृतिसे उतना समर ही करना पड़ता था। हाँ जीवनकी रक्षाके लिए उसे सतत सावधान अवश्य रहना पड़ता था। इस जीवनमें व्यस्तता तो है किन्तु मनुष्यके आत्मिक व्यवहारमें एक सादगी और एक सरल जीवनकी ही कल्पना की जा सकती है। ऐसे जीवनमें अपनी भावाभिव्यक्तिके लिए उसने जिस भाषाका व्यवहार किया होगा उसका स्वरूप भी अपने समाजके अनुरूप सरल होनेका आसानीसे अनुमान किया जा सकता है। उस समय न नियमका शासन था और न भाषाका कोई निश्चित स्वरूप। मनुष्यने स्वयं तुतलाना ही सीखा था। इसलिए उस समयकी भाषा स्वभावतः ही आडम्बरहीन और अभिव्यक्तिका एक सीधा-सा मार्ग थी। भाषाने जब इस स्थितिको पार कर लिया और आदिम मनुष्यने जीवनकी जटिलताको और कुछ बढ़ा लिया तो उसके समाजमें एक अलिखित मौखिक भाषा-साहित्यका उदय हुआ। इसे लोक भाषा या लोक-साहित्य कहा जा सकता है। लोक भाषाके इस लोक साहित्यमें लोक जीवनके साधारण सुख-दुखकी बातें और आनन्द तथा उत्सुकताकी मनोरंजक बातें पाई जाती

है। इस साहित्यकी भाषा सरल, भाव सहज और बोध गम्य और शैली सरल-सीधी होती थी। मनोरंजक तो यह है ही और साथ ही उत्साहवर्धक और लोकहितकर भी है। भाषा-साहित्यके इस स्तरको पार करनेके बाद ही हमें भाषाओंका साहित्यिक रूप उपलब्ध होता है। यह लोक-साहित्य ही सभी साहित्योंका उद्गम-स्रोत है।

६. छठी शताब्दीका प्रारम्भिक असमिया साहित्य

असमिया साहित्यका सर्व प्राचीन नमूना भी ऐसे ही लोक-साहित्यमें मिलता है। बिहु गीत, गो-चारण गीत, विवाह-गीत, ग्रामीण गीत, लोरी आदिके माध्यमसे हम असमिया साहित्यके प्राचीनतम रूपकी खोज कर सकते हैं। असमिया समाजमें आज भी इन गीतोंका बाहुल्य है किन्तु इनकी भाषा प्राचीन न रहकर आधुनिक रंगमें रँग गई है, भाव और अभिव्यंजना प्राचीन ही रह गई। इन लोक-गीतोंकी परम्परा असमिया भाषाके प्राचीन लोक-कवि दुर्गावर, पीताम्बर और मानकीके समयसे आजतक चली आई है। संसारकी समस्त भाषाओंमें यह बात पाई जाती है कि लोक-गीत और लोक-साहित्यका समाजमें बहुत प्रचार तो रहता है किन्तु उसे लिपि-बद्ध करनेका प्रयास बहुत कम होता है या नहीं ही होता है। इसलिए असमिया भाषा-साहित्यके इस आरम्भिक युगका लोक-साहित्य भी अलिखित ही रहा।

ऐसे अलिखित साहित्यका एक वृहत् अंश हमें 'डाकर-वचन' के रूपमें प्राप्त होता है। इन वचनोंका रचना-काल इसवी सन् छठी शताब्दी माना जाता है। प्रारम्भिक लोक-गीतोंके स्तरसे ये 'वचन' कुछ भिन्न प्रकारके होते हैं। इन वचनोंमें कृषि-सम्बन्धी जानकारी, मौसमका ज्ञान, औषधियोंका वर्णन, राजनीति और समाज-सम्बन्धी बहुत-सी बातोंका जिक्र बहुत ही सरल और रोचक रूपमें मिल जाता है। अधिकतर वचन उपदेशात्मक हैं और सुन्दर छन्द-बद्ध भी। 'डाक' को असमियाका मुर्रगान कहा जा सकता है। आगे चलकर इस लोक-परम्पराको बहुतसे ख्यात-अख्यात लोक कवियोंने आगे बढ़ाया है।

ऊपर संक्षेपमें ही असमिया साहित्यके प्रारम्भिक स्वरूपपर उल्लेख किया गया है। यहाँपर यह कह देना संभवतः अनुचित न होगा कि असमिया भाषा एक पूर्ण भारतीय आर्य भाषा है और इसकी उत्पत्ति डॉ॰ बिरिंचिकुमार बरुआके अनुसार सम्भवतः मागधी या गौड़ अपभ्रंशसे हुई है। कुछ विद्वानोंका मत है कि महाभारत कालमें असममें (उस समय प्राग्ज्योतिषपुर) आर्योंकी जो संस्कृत भाषा थी कालान्तरमें उसने अपनी जगहको प्राकृतके लिए छोड़ दिया और इस प्राकृतने स्थानीय विशेषताओंको ग्रहण कर असमिया जैसी एक सर्वांगपूर्ण भाषाको जन्म दिया। यहाँपर एक बात और जान लेना अच्छा होगा कि छठी शताब्दीके 'डाकर वचनों' अथवा ग्यारहवीं शताब्दीके अन्य साहित्यिक रचनाओंमें असमिया भाषाका जो रूप था आधुनिक असमिया भाषाका रूप उससे बहुत भिन्न नहीं है, जैसा हिन्दी

साहित्यके आदि शाक्त साहित्यमें पाया जाता है। शब्द-रचना और वाक्य रचनाकी दृष्टिसे यह परिवर्तन बहुत ही कम हुआ है।

वैष्णव-कालका पूर्ववर्ती असमिया समाज और उसका उस समयके साहित्यपर प्रभाव

तेरहवीं शताब्दीके पूर्वार्धमें असममें शक्तिशाली आहोम कबीलेका प्रवेश दक्षिण-पूर्वी दिशासे हुआ। थोड़े ही दिनोंके भीतर इस कबीलेके लोगोंने असमके विस्तृत पूर्वीय अंचलपर अपना अधिकार जमा लिया और लगातार छह शताब्दियों तक उनका शासन असमपर बना रहा। इस राजनीतिक स्थिरताके कारण देशमें एक स्थाई जीवन-धाराका स्थापित होना सम्भव हुआ और असमिया भाषा-साहित्यका सर्वोत्कृष्ट युग इसी-शासन कालमें रहा है और इसे एक स्थाई जीवन भी मिला। ईसाकी पन्द्रहवीं शताब्दीकी समाप्तिके साथ-साथ उत्तर भारतकी अजेय मुस्लिम शक्तिसे आहोम राज-शक्तिका संघर्ष हुआ और लगातार कई संघर्षोंके बाद ही राज्यका प्राचीन विस्तार कम होने लगा और असम राज्य कई छोटे-छोटे राज्योंमें बँट गया। इस कालमें असम या कामरूप कहनेसे आधुनिक असमके भू भागका ज्ञान तो होता ही था पर साथ ही आधुनिक बंगाल (अविभक्त) का उत्तरी हिस्सा भी जिसे आजकल रंगपुर जलपाइगुरी और कोचबिहार कहा जाता है इसके अन्तर्गत था। इसी कोच-बिहारमें कोच-राजवंशके राजा नरनारायणने इस समय राज्य किया था। राजा नरनारायणने असमिया साहित्यके विकासमें खूब हाथ बँटाया। वास्तवमें इस साहित्यने नरनारायणके शासन-कालमें एक सम्पूर्ण नया जीवन पाया। राजा नरनारायण विद्यानुरागी था और उसने अपनी राज-सभामें विद्वानोंको स्थान दिया था। महापुरुष शंकरदेव माधव देव रामसरस्वती सार्वभौम भट्टाचार्य आदि महान असमिया कवि एवं साहित्यिक इसकी राजसभाके सभा-पण्डित थे।

प्राचीन कालसे ही कामरूप तन्त्र-मन्त्रके देशके रूपमें प्रसिद्ध है। जादूकी बहुत-सी निराधार धारणाएँ इस राज्यके बारेमें चलती आई हैं और आज भी चलती रही हैं। बाद चलकर जब आहोम राज्य-शक्तिकी तरफसे यहाँके ब्राह्मण लोगोंको प्रोत्साहन मिला तो उनमें लोगोंमें पुरोहितका काम किया। आहोम कबीलेके लोग शाक्त थे या यों कहना चाहिए कि वे जब प्रारम्भमें हिन्दू धर्ममें दीक्षित होने लगे थे तो शाक्तोंके प्रभावमें आ गए थे। राज्यके कोने-कोनेमें देवीके पीठ बने हुए थे और उनमें प्रतिदिन सैकड़ों पशुओंकी बलि होती थी। बौद्धोंकी महायानी शाखा—जिसे असममें 'सहजिया' कहा जाता है—का भी प्राचीन कामरूपमें प्रबल जोर था और यह जादू-टोना और तन्त्र-मन्त्रका शिकार बन गई थी। आजकलके प्रसिद्ध कामरूप कामाख्या का मन्दिर तो उस समय था ही। इसकी ख्याति महाभारत कालसे चली आ रही थी। यह राज्यभरमें शाक्तोंका एक सुदृढ़ ऐसा पीठ बन गया था जिसका

शाली और कोई पीठ नहीं था। कहा जाता है कि उत्तर-पूर्वी असमके 'ताम्रेश्वरी' नामक मन्दिरमें उस समय 'नरबलि' प्रथाका भी चलन था। इस प्रकारकी अन्धकारमय विकट परिस्थितिमें असममें महापुरुष शंकरदेवका जन्म हुआ। उन दिनों राज्योंमें ऐसी विकट परिस्थितिका उद्भव हो गया था कि मानवता त्राहि त्राहि करने लगी थी। मनुष्यकी पाशविक वृत्तिकी सन्तुष्टिके लिए गुप्त अनुष्ठानोंमें नीच-से-नीच काम करनेके लिए भी किसीको हिचकिचाहट नहीं होती थी। उस अस्वाभाविक अवस्थामें मानवताकी पुकार सुनकर उसकी रक्षाके लिए मानो ईश्वरने ही एक महापुरुषको असममें भेज दिया।

ये महापुरुष श्री शंकरदेव थे। शंकरदेवका जन्म जिस वंशमें हुआ था वह भी शक्तिका ही उपासक था। किन्तु शंकरदेवको अपने वंशकी मान्यताओंके विरुद्ध ही विद्रोहकी पताका अपने हाथमें लेनी पड़ी। उन्होंने शक्ति पूजाके विरुद्ध अपना जो सिद्धान्त स्थापित किया था उसे श्रीमद्भागवतसे ग्रहण किया था। जिसे वे एकेश्वरवाद भी कहा करते थे। लोग उन्हें महापुरुष कहते थे और उनके चलाये हुए सिद्धान्तको उनके सम्मानमें (महापुरुषीया धर्म) कहते थे जो भागवती धर्मके नामसे प्रसिद्ध है। ऊपर बताया गया है कि आहोम राज्य शक्तिका उपासक था और इसलिए महापुरुष शंकरदेवका जन्म आहोम राज्यमें होनेपर भी अपने सिद्धान्तकी रक्षाके लिए उन्हें मातृभूमिको छोड़ना पड़ा था और अन्ततक कोच राजा नरनारायणके दरबारमें आश्रय लेना पड़ा था। इस महापुरुषका जन्म ई. सन् १४४९ में हुआ था। इनकी जन्मतिथिके बारेमें अब भी सन्देह है कि किस महीनेकी किस तिथिमें उनका आविर्भाव हुआ था। विभिन्न चरित् पुथियों (जीवनियों) में इन जन्मकी विभिन्न तिथियां मिलती हैं। इसी तरह शंकरदेवके जन्मके साथ-साथ में वैष्णव-धर्मका प्रारम्भ होता है।

असमिया साहित्यका आदिकाल

ई० छठी शताब्दीसे १५ वीं शताब्दीके पूर्वार्द्ध तक

ईसवीकी छठी शताब्दीसे महापुरुष श्री शंकरदेवके जन्मके समय तक अर्थात् पन्द्रहवीं शताब्दीके पूर्वार्द्धतक असमिया साहित्यमें बहुतसे कवि एवं साहित्यिक हुए। इन कवियोंकी रचनाओंमें काव्यकी दो धाराएँ बहती दिखाई देती हैं। जो कवि संस्कृत भाषाके जानकार थे और अपने पाण्डित्यके लिए उस युगमें विख्यात थे उन्होंने अपने काव्योंमें भक्तिकी सरस धारा बहानेकी कोशिश की। इनकी रचना या तो संस्कृत काव्य या पुराणोंका सुन्दर असमिया अनुवाद होती थी या इन काव्यों और कहानियोंको आधार बनाकर अपनी नवीन रचनाओंकी सृष्टि की थी। इन कवियोंमें सबसे प्राचीन कवि हेम सरस्वतीको माना जाता है जिनने 'प्रह्लाद चरित्र' नामक ग्रन्थ लिखा है। हेम सरस्वती असमिया भाषाके बेजोड़ ज्ञाता थे। उन्होंने

निस्सन्देह असमिया भाषाको बहुत सबल और पुष्ट रूप दिया है। दूसरा उल्लेखनीय कवि हरिहर विप्र हुआ जिसने महाभारतके 'अश्वमेध पर्व' का असमिया अनुवाद किया। तीसरा कवि हुआ कविरत्न सरस्वती। इसने महाभारतके 'द्रोणपर्व' का अनुवाद किया है। इस युगका सर्वश्रेष्ठ कवि माधवकन्दली हुआ। इस कविने सातों काण्ड रामायणका सुन्दर छन्दमें असमिया भाषामें अनुवाद किया है। इस यशस्वी कविने एक स्वतन्त्र काव्य भी लिखा था जिसका नाम है 'देवजित'। उसने इस काव्यके जरिए भगवान विष्णुके कृष्णावतारकी सर्वश्रेष्ठता दिखानेका प्रयत्न किया है। अर्जुनके द्वारा सभी देवताओंकी पराजय दिखाकर कृष्णकी श्रेष्ठता दिखाई गई है।

वैष्णव कालीन साहित्य ई० १४४९ से १६५० तक

असमिया साहित्यकी यह विकासशील अवस्था चल ही रही थी कि ई० सन् पन्द्रहवीं शताब्दीके मध्यकालमें असमिया साहित्यकी प्राण प्रतिष्ठा करनेवाले महापुरुष शंकरदेवका जन्म हुआ। उन्होंने असमके प्रचलित शाक्त मतोंके विरुद्ध श्रीमद् भागवतके अहिंसात्मक भक्तिवादका जो जय-घोष किया उससे शाक्तोंके पतनको ही निकटस्थ नहीं किया बल्कि असमिया साहित्यको भी अपने विकासके लिए नई प्रेरणा दी। अपने धार्मिक मतके समर्थन और प्रतिपादनके निमित्त भी शंकर देवको साहित्य-रचनाकी शरण लेनी पड़ी और वे साहित्यकी सृष्टिमें निष्ठाके साथ जुट गए। उन्होंने भागवत पुराणके प्रथम, द्वितीय, अष्टम, दशम, एकादश और द्वादश अध्याय, रामायणके सप्तम काण्ड, रुक्मिणी हरण काव्य, निमिनवसिद्ध सम्वाद, वैष्णवामृत, भक्ति रत्नाकर (संस्कृतमें) कीर्त्तन आदि ग्रन्थ कुछ अनुवाद और कुछ मौलिक रूप लिखे थे। उन्होंने करीब तीस ग्रन्थ लिखे थे जिनमें 'कीर्त्तन' सबसे महत्वपूर्ण है। यह ग्रन्थ बहुतसे संस्कृत ग्रन्थोंसे अपने धर्ममतके समर्थनके लिए महत्वपूर्ण अंशोंको चुनकर अनुवाद करके तैयार किया गया था। 'कीर्त्तन' को हम उनके धर्ममतका छोटा-सा संस्करण कह सकते हैं। विषयवस्तुको समझानेका कौशल और लिखनेकी शैली प्रशंसनीय है और आज उनके भक्तोंमें देशकी जनतामें जिस प्रकार तुलसीदासके रामचरित मानसका आदर और सम्मान है उसी प्रकार कीर्त्तन-घोषाके प्रति असमिया ग्रामीण जनताका सम्मान और आदर है। सन्ध्याको और प्रातःकालमें हर झोपड़ियोंमें 'कीर्त्तन घोषा' का मधुर स्वर हर गाँवमें गूँजने लगता है।

श्री शंकरदेव असमिया भाषा-साहित्यके प्रथम गद्यकार और नाट्यकार हैं। श्री शंकरदेवने 'अंकीया नाट' के नामसे असमिया साहित्यमें नाट्य साहित्यकी एक नई परम्पराकी स्थापना की। उन्होंने कालिय दमन, पत्नी प्रसाद, रुक्मिणी हरण, पारिजात हरण, श्रीरामविजय, केलि गोपाल, जैमिनियाख्यान आदि नाटकोंकी रचना की। नाटकोंमें गद्यके प्रयोगकी पहले कोई परम्परा न होते हुए भी स्वतन्त्र श्री शंकरदेवके नाटकोंमें असमिया गद्यका प्रयोग और वह भी सफल प्रौढ़ रूपमें—असमिया भाषा

साहित्यके विकासमें एक दूसरी उल्लेखनीय घटना है। नाटक रचनेकी परम्परा भी असमियामें इसके पहले नहीं थी। नाटककी रचना और मंचका आविर्भाव दोनों एक साथ हुए। सर्व प्रथम असमिया गद्य भी नाटकोंके कथोपकथनमें ही दिखाई पड़ा।

अंकीया नाटककी रचनामें श्री शंकरदेवने संस्कृत नाट्य साहित्यसे अवश्य प्रेरणा ली है इसमें कोई संदेह नहीं है। किन्तु संस्कृत नाटक उपनाटक आदिका कोई भी लक्षण इनके नाटकोंमें पूर्ण रूपसे नहीं है। इसी समय कहा जाता है कि मिथिलामें मैथिलीमें या संस्कृत मैथिली मिश्रित भाषामें लोक-परम्परासे कुछ नाटक लिखे गए थे। श्री शंकरदेवने इन नाटकोंको कहीं खेलते देखा होगा या पढ़ा होगा ऐसा अनुमान ही किया जा सकता है। उसकी पुष्टिके लिए हमारे पास कोई तथ्य उपलब्ध नहीं है। श्रीशंकरदेवके इन नाटकों द्वारा एक ओर तो धार्मिक मतके प्रचारमें सहायता मिली और दूसरी ओर साहित्यका भण्डार पुष्ट हुआ।

इन ग्रन्थोंके अलावा श्री शंकरदेवने अपने धर्ममतको दृढ़ करनेके लिए अनादि पातन भक्ति प्रदीप लीलामाला अजामिलोपाख्यान नाममालिका प्रेम कलपी गोपा कुरुक्षेत्र बलिछलन नामक विभिन्न कथोपेत ग्रन्थ लिखे। ग्रन्थोंकी विभिन्नता होते हुए भी इनकी विषयवस्तुमें भिन्नता नहीं आई। उन्होंने बरगीत नामसे कुछ ऐसे गीत रचे हैं जिनमें असमिया और ब्रजभाषाका एक सुन्दर समन्वय दिखाई पड़ता है।

महापुरुष श्री शंकरदेवके बाद उनकी परम्पराको उनके सर्वप्रिय शिष्य श्री माधवदेवने साहित्यिक और धार्मिक—दोनों दृष्टियोंसे कायम रखा। अपने गुरुके जीवित रहते ही श्री माधवदेव साहित्यिक जीवनमें आ गये थे और आजीवन गुरुके दाहिने हाथ बनकर उनके कार्योंमें सहायता देते रहे।

श्री माधवदेवकी कृतियोंमें नाम-घोषा रामायण आदि काण्ड भक्ति रत्नावली नाममालिका राजसूय यज्ञ वैकुण्ठ कीर्तन श्रीशंकरदेवका संस्कृत ग्रन्थ भक्ति रत्नाकरका भाष्य आदि हैं। इन ग्रन्थोंके द्वारा श्री माधवदेव अपने गुरुके धर्म-मतकी भित्तिको दृढ़ बनानेमें समर्थ तो हुए ही साथ ही असमिया भाषाके साहित्य भण्डारमें भी अनुपम रत्न छोड़ गए। इन ग्रन्थोंके छन्दोंमें सबोंमें ऐसी भावना छिपी है कि उसे पा देनेसे श्रोता और गायक दोनों झूम उठते हैं। वैष्णव धर्मके प्रति जनताके आकृष्ट होनेके मूल कारणोंमें धर्म प्रचारके साधनोंका आकर्षक रूप भी एक था। महापुरुष श्री शंकरदेवके अनुकरणमें श्री माधवदेवने भी कुछ [1] अंकीया नाट लिखे हैं। उनकी अबतक पाई गई सूची इस प्रकार है—भोजन बिहार, भूमि लेटोवा अर्जुन भजन पिम्परा-गुचुवा राम झुमुरा

---

१ हिन्दीके एकांकीकी तरहकी एक साहित्य-विधा

चोरधरा, पिम्परा गुचोवा, भूषण हरोवा और ब्रह्मामोहन प्रभृति। इन नाटकोंमें श्री माधवदेवने श्री शंकरदेवकी भाँति भगवान श्रीकृष्णकी महिमामय लीलाकी व्यंजना की है। उन्होंने इसमें अपनी कोई नई चीज नहीं जोड़ी है। अपने गुरुके पद चिन्होंपर ही चलना उन्हें भाता था।

उपरोक्त रचनाके अलावा श्री माधवदेवने महापुरुष श्री शंकरदेवके प्रमुख बरगीतकी रचना भी की थी। कहा जाता है कि श्री शंकरदेवके लिखे हुए बरगीत किसी समय मकान जल जानेके कारण नष्ट हो गए थे और श्री शंकरदेवने श्री माधवदेवको पुनः कुछ ऐसे गीत रचनेके लिए आज्ञा दी। गुरुके आदेशानुसार ही उन्होंने बरगीत लिखे हैं। [2]बरगीतोंमें श्री माधवदेवने एकेश्वरवादका सिद्धान्त प्रतिपादित करते हुए हरिभक्ति रसकी स्थापना की है। बरगीतोंको गाकर श्री माधवदेव स्वयं वैष्णव मतका प्रचार करते थे। जिस प्रकार सूरदास हिन्दी साहित्यमें वात्सल्य भावके सर्वश्रेष्ठ कवि हुए, श्री माधवदेव उसी प्रकार असमिया साहित्यके कवि रहे। बरगीतोंमें भगवान श्रीकृष्णके बालजीवनकी विभिन्न घटनाएँ मनोरंजक रूपमें अभिव्यक्त हुई हैं। प्रत्येक बरगीतमें श्रीकृष्णके बचपनकी किसी-न-किसी कहानीका वर्णन मिलता है। इन बरगीतोंका आजकल शास्त्रीय गीतोंके जैसा आदर और सम्मान किया जाता है और उनका गायन भी उसी प्रकार ही होता है। बरगीतोंकी भाषा ब्रजबुलि थी जो असमिया, मैथिली और ब्रजभाषा का एक मिश्रित रूप थी।

ई. सन सोलहवी शताब्दीके आरंभिक कालमें कवि रामसरस्वतीका जन्म हुआ था। महापुरुष श्री शंकरदेवकी कृपासे उन्हें कोचबिहारके राजा नरनारायणकी राज सभामें जगह मिली और श्री शंकरदेवके कहनेसे ही उन्हें नरनारायण राजासे महाभारतका असमिया छन्दमें अनुवाद करनेकी आज्ञा मिली। राजाने उन्हें मूल महाभारतकी एक प्रति भेंट की और कहा जाता है कि इस ग्रन्थको राम सरस्वतीके पास ले जानेके लिए एक हाथीकी व्यवस्था करनी पड़ी थी। नरनारायणने यद्यपि यह कार्य कविको ही सौंपा था किन्तु साथ साथ दूसरे कवियोंसे भी इस कार्यमें सहयोग लिया गया था। महाभारतका सम्पूर्ण अनुवाद नरनारायणके कालमें नहीं हो सका। उनके छोटे भाई चिलारायके पौत्र धर्मनारायणके कालमें इस कार्यकी समाप्ति हुई। महाभारतका असमिया भाषान्तर मूलकी हूबहू नकल नहीं थी। अनुवादकोंने अपनी तरफसे बहुत-सी अन्य घटनाएँ और कथाएँ जोड़ी हैं। अनुवादके कार्यमें स्वतन्त्र बुद्धिसे काम लिया गया है। सम्भवतः इस कारण वश असमिया साहित्यको जीवनकी एक बड़ी शक्ति मिली थी और परवर्ती कालमें साहित्यका पथ और कथाके सुपरिचित एवं विस्तृत क्षेत्रको प्राप्त हुआ। मूल कथाकी विषय वस्तुके साथ अनुवादकोंने पुराण आदिसे लेकर कहानियाँ

---

२ असमका प्रसिद्ध विशिष्ट धार्मिक संगीत।

योग देनेके कारण जनतामें उसका प्रचार और लोकप्रियता बढ़ चली और असमिया साहित्यको बढ़नेमें सुगम मार्ग मिल गया।

महाभारतकी कथाके आधारपर रामसरस्वतीने रोमान्टिक काव्य भी लिखे हैं। उनमेंसे मुख्य हैं—

कुलाचल वध, जंघासुर वध, घटासुर वध।

'भस्मकर्म युद्ध' नामक काव्य भी रोमान्टिक काव्यका एक अच्छा नमूना है। रामसरस्वतीने 'भीमचरित' नामकी एक दूसरी रचनामें भीमके नाम और जीवनके कुछ चित्र बहुतही सुन्दर रूपमें हास्य रसका पुट देकर खींचे हैं। इस काव्यमें उस समयके असमिया समाजका जीवन और समाज-व्यवस्थाका अच्छा विवरण मिलता है। असमिया साहित्यमें यह एक बेजोड़ कृति है। 'व्याध चरित' नामसे उसका दूसरा काव्य भी हमें प्राप्त है। रामसरस्वतीने—महाराजा नरनारायणके अनुरोधपर जयदेव कृत गीत गोविन्दका असमिया भाषान्तर बहुत ही ललित छन्दोंमें किया है।

अनन्त कन्दली श्री शंकरदेवका समकालीन कवि था। उसने भी श्री शंकरदेवके अनुग्रहसे ही महाराज नरनारायणकी राज सभामें स्थान पाया था। कुछ लोगोंका विश्वास है कि रामसरस्वती और अनन्त कन्दली दोनों एक ही व्यक्ति हैं। कहते हैं कि इनके दस नाम थे और रामसरस्वती तथा अनन्त कन्दली उन्हीं दस नामोंमें दो नाम थे। अनन्त कन्दलीने श्री शंकरदेवसे वैष्णव धर्मकी दीक्षा ली और गुरुके आदेशसे श्री मद्भागवतके दशम स्कन्धका असमियामें रूपान्तर किया। इसके अलावा उसने 'कुमार हरण' काव्य और 'श्रीराम पाताल प्रवेश' नाटक लिखे। यह नाटक श्री शंकरदेवके नाटकोंकि टक्करका है और आज भी उसका आदर असमिया समाजमें होता है। कुमार हरण काव्यकी श्री शंकरदेवके रुक्मिणी काव्यसे तुलना की जा सकती है। अनन्त कन्दलीने अनन्त रामायण नामसे एक संक्षिप्त रामायण भी लिखी थी।

सार्वभौम भट्टाचार्य वैष्णव युगका एक विख्यात ग्रन्थकार था। वह पहले शाक्त था और बादको श्री शंकरदेवसे उसने वैष्णव धर्म की दीक्षा ली। श्री शंकरदेवके साथ शाक्त और वैष्णव धर्म सम्बन्धी होनेवाले शास्त्रार्थमें वह पराजित हुआ और वाराणसी चला गया और वहाँपर विश्वेश्वर पंचाननके अधीन रहकर उसने शास्त्रों का अध्ययन किया। पाँच वर्ष तक वहीं रहनेके पश्चात् अपार ज्ञानोपार्जन कर वह स्वदेश लौटा और तुरन्त वैष्णव हो गया। वाराणसीमें ही उसने पद्मपुराणका असमिया में अनुवाद किया था और कामरूप पहुँचकर भागवत पुराण भविष्य पुराणका अनुवाद किया। उसने श्री शंकरदेवका एक जीवन चरित भी लिखा है।

श्रीधर कन्दली भी वैष्णव कालका एक अच्छा कवि था। वह भी शंकरदेव का समकालीन था और श्री शंकरदेव उसको बहुत मानते भी थे। संभवतः इसीलिए

छोड़ देनेके कारण जनतामें उसका प्रचार और लोकप्रियता बढ़ चली और असमिया साहित्यको बढ़नेमें सुगम मार्ग मिल गया।

महाभारतकी कथाके आधारपर राममरस्वतीने रोमांटिक काव्य भी लिखे हैं। उनमें से मुख्य हैं—

कुलाचल वध, बघासुर वध, खटासुर वध।

'अश्वकर्ण युद्ध' नामक काव्य भी रोमांटिक काव्यका एक अच्छा नमूना है। रामसरस्वतीने 'भीमचरित' नामकी एक दूसरी रचनामें भीमके साथ जीवनके कुछ चित्र बहुतही सुन्दर रूपमें हास्य रसका पुट देकर खींचे हैं। इस काव्यमें उस समयके असमिया समाजका जीवन और समाज-व्यवस्थाका अच्छा विवरण मिलता है। असमिया साहित्यमें वह एक बेजोड़ कृति है। व्याध चरित नामसे उसका दूसरा काव्य भी हमें प्राप्त है। रामसरस्वतीने—महाराजा नरनारायणके अनुरोधपर जयदेव कृत गीत गोविन्दका असमिया भाषान्तर बहुत ही ललित छन्दोंमें किया है।

अनन्त कन्दली श्री शंकरदेवका समकालीन कवि था। उसने भी श्री शंकरदेवके अनुग्रहसे ही महाराज नरनारायणकी राज सभामें स्थान पाया था। कुछ लोगोंका विश्वास है कि राममरस्वती और अनन्त कन्दली दोनों एक ही व्यक्ति हैं। कहते हैं कि इसके दस नाम थे और राममरस्वती तथा अनन्त कन्दली उन्हीं दस नामोंमें दो नाम थे। अनन्त कन्दलीने भी शंकरदेवसे वैष्णव धर्मकी दीक्षा ली और गुरुके आदेशसे श्री मद्भागवतके दशम स्कन्धका असमियामें रूपान्तर किया। इसके अलावा उसने 'कुमार हरण काव्य' और 'भीमार पाताल प्रवेश नाटक' लिखे। यह नाटक भी शंकरदेवके नाटकोंकि टक्करका है और आज भी उसका आदर असमिया समाजमें होता है। कुमार हरण काव्यकी श्री शंकरदेवके रुक्मिणी काव्यसे तुलना की जा सकती है। अनन्त कन्दलीने अनन्त रामायण नामसे एक संक्षिप्त रामायण भी लिखी थी।

सार्वभौम भट्टाचार्य वैष्णव युगका एक विख्यात ग्रन्थकार था। वह पहले शाक्त था और बादको श्री शंकरदेवसे उसने वैष्णव धर्म की दीक्षा ली। श्री शंकरदेवके साथ शाक्त और वैष्णव धर्म सम्बन्धी होनेवाले शास्त्रार्थमें वह पराजित हुआ और वाराणसी चला गया और वहाँपर विश्वेश्वर वाचस्पतिके अधीन रहकर उसने शास्त्रों का अध्ययन किया। पाँच वर्ष तक वहीं रहनेके पश्चात् अपार ज्ञानोपार्जन कर वह स्वदेश लौटा और तुरन्त वैष्णव हो गया। वाराणसीमें ही उसने पद्मपुराणका असमिया में अनुवाद किया था और कामरूप पहुँचकर भागवत पुराण भविष्य पुराणका अनुवाद किया। उसकी श्री शंकरदेवका एक जीवन-चरित्र भी मिला है।

श्रीधर कन्दली भी वैष्णव कालका एक अच्छा कवि था। वह श्री शंकरदेव का समकालीन था और श्री शंकरदेव उसको बहुत मानते भी थे। संभवतः इसीलिए

संग्रह आदि ग्रन्थ संस्कृतमें लिखे थे। इसके अलावा उसने 'भक्ति रत्नावली' का असमियामें अनुवाद किया। 'प्रसंगमाला' और 'गुरु बखानसी' नामकी दो पुस्तकें उसने पद्यमें लिखीं। भट्टदेवका गद्य-साहित्य आधुनिक भारतीय भाषाओंके प्राचीनतम गद्योंमेंसे है। आधुनिक असमिया गद्य-साहित्य भट्टदेवके गद्य-साहित्यसे बहुत भिन्न नहीं है। भट्टदेवके कथा-भागवत और कथा-गीता अपने समयके गद्य साहित्यका उत्कृष्टतम नमूना है। इसके अतिरिक्त रघुनाथने 'कथा-रामायण', भागवत भट्टाचार्यने 'कथाधूम', कृष्णानन्द द्विजने 'सात्वततन्त्र' और परशुरामने 'कथा घोषा' लिखी है। इन सबकी लेखन-शैली भट्टदेवकी जैसी ही रही है।

गोपाल आताने भी शंकर-माधवकी परम्परामें 'जन्म यात्रा' और 'उद्धव सम्वाद' नामसे दो नाटक लिखे हैं। नाटकोंकी भाषा देखनेसे मालूम होता है कि गोपाल आता एक अच्छा लेखक था। रामचरण ठाकुरने 'गुरुचरित' या 'शंकर चरित' लिखा था। 'कंस वध' नामसे उसका एक नाटक भी मिला है। द्विज भूषणने 'अजामिल उपाख्यान' नामसे दूसरा नाटक लिखा है। दैत्यारि ठाकुरने 'नृसिंह यात्रा' और 'स्यमन्त हरण' नामसे दो नाटक लिखे हैं। इन नाटकोंके भाव तथा शैली भी शंकर-माधवकी कोटिकी ही है। दैत्यारि ठाकुरने 'गुरु चरित' नामसे भी शंकर-माधवकी एक विस्तृत जीवनी लिखी थी। यह ग्रन्थ पद्यमें था। पुरुषोत्तम विद्यावागीशने १५६८ ई. के आसपास 'प्रयोग रत्न माला' नामसे एक संस्कृत-व्याकरण लिखा था। संस्कृत भाषाको सहज ही में बोलने और समझनेके उद्देश्यसे यह व्याकरण लिखा गया था।

इसी कालके गोपाल मिश्रने गीता-भागवतके चुने हुए श्लोकोंका असमिया रूपान्तर कर 'दीपा-रत्न' नामसे प्रस्तुत किया। इसके अलावा 'शंखचूड़ वध', 'महिषासुर वध', 'परमार्थ निरूपण' आदि ग्रन्थ भी लिखे। गोविन्द मिश्रने गीताका पद्यमें रूपान्तरकर 'गीता माहात्म्य' नामक ग्रन्थ प्रस्तुत किया। गोविन्द मिश्रपर भी शंकरदेवका प्रभाव देखा जाता है इसकी भाषा रसयुक्त और अलंकारपूर्ण है। सार्वभौम भट्टाचार्य नरनारायण राजाका सभा पण्डित था। सार्वभौम भट्टाचार्य भी शंकरदेवका अनुयायी था और उसने 'भविष्य पुराण', 'स्वर्ग खण्ड रहस्य' और 'भागवतकी रचना की थी। 'स्वर्ग खण्डमें अपनी जीवनीके साथ-साथ भी शंकरदेवके बारेमें भी उल्लेख था। कंसारि अथवा पीताम्बर कायस्थने विराट् पर्वके कुछ अध्याय असमिया अनुवाद किया। 'विराट् पर्वका' कुछ अंश भी इसमें अनूदित किया गया था। विद्या पञ्चाननने 'भीष्म पर्व' का अनुवाद और 'पाताल काण्ड रामायण' की रचना की। कालीनाथ द्विज नामक लेखकने महाभारतका 'सभा पर्व' और 'द्रोण पर्व' का भाषान्तर किया।

इस युगमें जीवनी साहित्यकी परम्परा भी असमिया साहित्यमें चल पड़ी। ये जीवनियाँ अवश्य ही आधुनिक जीवनियोंकी तरह नहीं थीं। ये जीवनियाँ भक्त-

महन्त और धर्म-गुरुओंके सम्बन्धमें ही लिखी जाती थीं। उस समय इन जीवनियोंको चरित कहा जाता था। चरितकारोंमें द्विजभूषण, रामचरण ठाकुर, दैत्यारी ठाकुर, रामानन्द द्विज आदिका नाम प्रमुख है। द्विजभूषणने 'शंकर चरित' और 'सत्राजित उपाख्यान नाटक' लिखे थे। रामचरण ठाकुरने 'शंकर-माधव सम्वाद' नामक रहस्यवादी भक्ति ग्रन्थ, 'कंस वध' नामक नाटक और 'शंकर चरित' नामक जीवनी लिखी है। दैत्यारि ठाकुरने 'गुरु चरित' नामक ग्रन्थ लिखा है। जिसमें श्री शंकरदेव और श्री माधवदेव दोनोंकी जीवनी है। उसमें 'नृसिंह यात्रा' और 'स्यमन्त हरण' दो नाटक भी लिखे हैं। रामानन्द द्विजने श्री शंकरदेव और भवानीपुरिया आताकी जीवनी लिखी।

इस कालके अन्तिम भागमें श्रीमद्-भागवत पुराणके विभिन्न स्कन्धोंका असमिया पद्यमें रूपान्तर हुआ है। कमलाचन्द्रने उसके 'चतुर्थ स्कन्ध' का रूपान्तर और रामचरित लिखा। हरिदेवने 'पंचम स्कन्ध' का अनुवाद किया। [illegible]ने 'चतुर्थ और पंचम' दोनों स्कन्धोंका अनुवाद किया। गोपाल चरण द्विजने 'तृतीय और अष्टम' स्कन्धका रूपान्तर किया केशवदेवने भागवतके 'नवम स्कन्ध' का अनुवाद किया। इसी प्रकार महापुरुष श्री शंकर देवने श्रीमद्भागवतकी जो परम्परा असममें स्थापित की थी उसकी परम्परा निरन्तर चलती रही और यहां वैष्णव आन्दोलनको भी बल मिलता रहा। इसी समय पुरुषोत्तम गजपतिने 'दीपिका छन्द' नामक ग्रन्थका निर्माण किया। इसमें ब्राह्मण और बौद्ध धर्मका पतन दिखाकर वैष्णव धर्मका प्राधान्य दिखाया गया है। इसने 'छयामन' नामक एक दूसरे ग्रन्थकी रचना की है।

उत्तर वैष्णव कालमें भक्तिमूलक ग्रन्थके अलावा दूसरे विषयोंके ऊपर भी ग्रन्थ लिखे गए थे। गणित ज्योतिष स्मृति आदि विषयोंपर भी ग्रन्थ लिखे गए। श्रीधर कन्दलीने ज्योतिषका 'भास्वती' और बकुल कायस्थने लीलावतीके गणित शास्त्रका असमिया रूपान्तर किया है। लीलावतीका अनुवाद 'किताबत मंजरी' नामसे प्रसिद्ध है। 'ज्योतिष चूड़ामणि' नामक ज्योतिष ग्रन्थ भी इस समय उपलब्ध है। पीताम्बर सिद्धान्त वागीशने 'कौमुदी' नामक १८ खण्डोंके स्मृति ग्रन्थकी भी रचना की थी।

बरगीतोंके नमूनेपर इस समय अनेक गीतोंकी भी रचना हुई थी। इन गीतोंके कई संग्रह अबतक निकल चुके हैं।

उत्तर वैष्णव काल (१६५० ई० से १८२६ ई० तक)

वैष्णव-काल और उत्तर वैष्णवकालके बीच विशेष रूपसे यह अन्तर है कि जहां वैष्णव कालमें वैष्णव-भक्ति-भावना ही साहित्यमें बोलबाला था वहां उत्तर वैष्णवकालमें इसका जोर मन्द होकर लौकिक विषयोंका प्राधान्य अधिक होने लगा। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि इस कालमें वैष्णव प्रभाव रहा ही नहीं।

वैष्णवकालमें साहित्यके क्षेत्रमें मोटे तौरपर दो प्रधान लक्षण देखे गए थे। एक तो यह था कि श्री शंकरदेवने भागवत पुराणके आधारपर विशुद्ध वैष्णव धर्मका आदर्श साहित्यके सामने रखा। दूसरा लक्षण था—भट्टदेवके द्वारा गद्यशैलीका प्रतिपादन। उत्तर वैष्णव कालमें इन दोनों लक्षणोंका विकास हुआ है। समूचे आसामपर धीरे धीरे आहोम शासनका स्थायी विस्तार हो जानेके कारण भी असमिया साहित्यके विस्तारमें सुविधा और अनुकूल अवस्था प्राप्त हो सकी। अतः इस कालके साहित्यके लिए विभिन्न दिशाओंमें अग्रसर होनेके निमित्त रास्ता खुल गया।

महाभारतके विभिन्न पर्वोके असमिया अनुवादका दूसरा दौर इसी कालमें प्रारम्भ हुआ। सागर खड़िने वनपर्वके आधारपर 'कुर्मावली वध' नामक काव्य-ग्रंथ की रचना की। विष्णुराम द्विजने 'वातापर्व' ग्रंथकी रचना की। द्विज भट्टाचार्यने सभापर्वके आधारपर 'शिशुपाल वध' का रूपान्तर किया। दामोदर दासने 'द्रोणपर्व' 'शल्य पर्व' का और राममिश्रने 'भीष्म पर्व' का अनुवाद किया। कविराज मिश्रने 'गदापर्व' और लक्ष्मीनाथ द्विजने 'शान्ति पर्व'का अनुवाद किया। अठारहवीं शताब्दीमें मधुराम द्विजने 'महाप्रस्थानिक पर्व' और 'मुषल पर्वका' अनुवाद किया। अनन्त ठाकुर आताने महाभारतसे हटकर 'श्रीराम कीर्तन' और 'प्रेमलता' की रचना की। उसमें विष्णु और राम दोनों अवतारोंके बारेमें वर्णन है। यह रामायण विष्णु-रामायण की तरह लिखी गई है।

रघुनाथ महन्तने रामायणको गद्यमें लिखनेका प्रथम प्रयत्न किया है। उसमें 'शत्रुंजय' और 'अद्भुत रामायण' नामक और दो ग्रंथ लिखे हैं। रघुनाथ महन्त पण्डित व्यक्ति थे और 'कथा रामायण' नामक उक्त गद्य रामायणमें कथानकके साथ-साथ आदर्शोंका भी प्रतिपादन किया है। अबतक उसके चार खण्ड ही प्राप्त हुए हैं। आदि अयोध्या अरण्य और किष्किन्धा। यह मूल रामायणका संक्षिप्त अनुवाद है। 'कथा-रामायण' असमिया गद्य-साहित्यकी शृंखलामें तीसरी कड़ी है। श्रीशंकरदेवने गद्य-धर्मी गद्य भाषाका जो प्रारम्भ किया था भट्टदेवने उसे सुदृढ़ भूमिपर स्थापित किया और रघुनाथ महन्तने गम्भीर और अलंकार प्रधान भाषाके साथ-साथ घरेलू भाषा तक उसे पहुँचाया।

रामायणके आधारपर बहुत सारे ग्रन्थ उस समय लिखे गए। गंगारामदासने 'सीता वनवासकी' रचना की। भवदेव द्विजने 'अश्वमेध पर्व' इतिहास पण्डितने दुर्गावर गीति-रामायणके नमूनेपर 'अंगद रायबारी' रचना की। धनंजयने 'पवन-चरित' अथवा 'मन्दोदरी अभिहरण' की रचना की है जिसमें हनुमानके द्वारा मन्दोदरीका रूप धारणकर अभिहरणका वर्णन किया गया है।

राम मिश्रने आहोम राज-धर्माचार्योंके आदेशपर 'भीष्म पर्व' विष्णु शर्माके 'हितोपदेश' और वररुचिके 'पुष्कर चरित' का पद्यानुवाद किया है। रामनाथ आताने 'भक्ति मुक्तावली' नामक वैष्णव भक्ति सम्बन्धी ग्रन्थ लिखा। रामचन्द्र

भरपास मोहृहीने हयग्रीव माधवर आख्यान और योगिनी-तन्त्र नामक दो ग्रन्थ लिखे।

कोच राजाओंकी तरह ही आहोम राजाओंने भी असमिया साहित्यके उत्थानमें योगदान दिया है। आहोम शासक धर्म गुरुसे बहुत दिनोंतक अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बनाए रखनेमें ही प्रयत्नशील रहा। अतः इस कालमें उसकी पृष्ठिपोषकतामें आहोम भाषामें ही अपने दस्तावेज और शासन सम्बन्धी अन्य ग्रन्थ लिखे। किन्तु आहोम राज्यका जब विस्तार बढ़ा और इसमें जब प्रौढ़ता आई तो वह विशाल जनसमूहके प्रभावको बहुत दिनोंतक और बाधा नहीं दे सका। आहोमोंको अपनी जन्म-भूमिका मोह सदाके लिए छोड़ देना पड़ा और अपने राज्यके विशाल जन-समूहके साथ मिल जाना पड़ा। इसी कारणसे असमिया साहित्यकी उन्नतिमें भी उसे हाथ बँटाना पड़ा।

आहोम राजाओंमें रुद्रसिंह और शिवसिंह भाषा-साहित्यके प्रति अनुरागी थे और उनकी पृष्ठ-पोषकतामें असमिया भाषा-साहित्यकी यथेष्ट उन्नति हुई। आहोम राज-सभामें 'ब्रह्मवैवर्त पुराण' 'गीत गोविन्द' 'शकुन्तला' आदि धर्म निरपेक्ष ग्रन्थोंका समादर था। उपरोक्त दोनों राजाओंने गीत-गोविन्दके अनुकरणपर असमिया भाषामें कविता भी की थी। शिवसिंहकी कविताको तत्कालीन असमिया साहित्यमें अच्छा स्थान भी मिला है। इन्हीं आहोम राजाओंकी पोषकतामें गीत गोविन्दका असमिया छन्दमें अनुवाद कविराज चक्रवर्तीने किया। उसीने रानी फुलेश्वरीकी आज्ञासे 'शंख-चूड़ वध-काव्य' रानी अम्बिकेश्वरीकी आज्ञासे 'ब्रह्मवैवर्त पुराण' 'कृष्ण जन्म खण्ड' और 'शकुन्तला' का भी अनुवाद किया। संस्कृतमें भी उसमें सिद्धि उसके बारेमें एक विवरण प्रस्तुत किया गया है। 'भास्वति' नामक संस्कृत ज्योतिष शास्त्रका भी अनुवाद उसने किया।

इस कालमें पुराणोंके अनुवाद सम्बन्धी एक नया दौर भी प्रारम्भ होता है। ब्रह्मवैवर्त पुराणके अनुवादके सम्बन्धमें पहले ही उल्लेख किया गया है। इस पुराणका यही प्रथम अनुवाद है और इसके पहले इस पुराणके प्रतिपादित विषयका असमिया रामायण और साहित्यमें विशेष स्थान नहीं था। रुचिनाथ कन्दलीने 'कल्कि पुराण' और 'मार्कण्डेय चण्डीका' अनुवाद किया। चण्डीके अनुवादके समय उसमें 'कल्कि पुराण' 'वामन पुराण' और 'ब्रह्मवैवर्त पुराण' की सहायता ली है। मार्कण्डेय चण्डीके कई अनुवाद इस समय हुए। रंगनाथ चक्रवर्ती मधुसूदन मिश्र इन दोनोंने उसका अनुवाद किया। कविशेखर विद्याचन्द्र भट्टाचार्यने 'हरिवंश' का अनुवाद किया। अनन्त आचार्यने 'आनन्द लहरी' नामक काव्य-ग्रन्थकी रचना की और द्विज भूम मापने 'धर्म-संवाद' नामक एक ग्रन्थकी रचना की।

पुराणोंके अनुवादका जो सिलसिला इस समय प्रारम्भ हुआ उसके अनुसार भागवत मिश्रने 'विष्णु पुराण' और 'भागवत तन्त्र' का, कालिदासने 'यम-गीता' का, परशुराम द्विजने सम्पूर्ण 'विष्णु पुराण' और 'धर्म पुराण' का, रामगोविन्दने

'भागवत पुराण' और 'विष्णु पुराण' का, बलोराम द्विजने 'ब्रह्मवैवर्त पुराण' के कृष्ण जन्म खण्डका, दुर्गेश्वर द्विजने ब्रह्मवैवर्त पुराणके 'प्रकृति खण्ड' का, भुवनेश्वर वाचस्पति मिश्रने 'बृहन्नारदीय पुराण' का असमिया अनुवाद प्रस्तुत किया। ब्रह्मवैवर्त पुराणके इस समय बहुत सारे अनुवाद प्राप्त हुए हैं। आहोम राज-पत्नीने रामपुराणके मतवादकी पुष्टि की थी जिसमें अपने शाक्त मतकी पुष्टि हुई थी।

पुराणोंके इन अनुवादोंके साथ-साथ अनेक कवियोंने फुटकर विभिन्न रचनाएँ भी की थीं। इन रचनाओंमें अनुवाद और मौलिक दोनों प्रकारोंकी रचनाएँ मिलती हैं। इन रचनाओंकी विषय-वस्तु वैष्णव मतवादका पोषण, शक्ति मतवादोंकी पुष्टि, एकान्त भक्तिका माहात्म्य आदि विभिन्न प्रकारोंकी थी। श्री शंकरदेवके बरगीत और श्रीमाधवदेवकी घोषाके आदर्शपर बहुत सारे भक्तिमूलक गीत भी इस समय लिखे गए। संस्कृतके साथ-साथ हिन्दीसे भी अनुवाद कार्य हुआ था। हिन्दी काव्य मृगावती, मधुमालती, पाहुड़ी और पद्मावतीका अनुवाद इसी समय पाया जाता है। इनके अलावा राम-चरितमानसका कुछ अधूरा अनुवाद भी इसी कालमें पाया जाता है।

रामानन्द द्विजका "महामोह काव्य" वैष्णव परम्पराका एक उल्लेख योग्य ग्रन्थ है। यह रूपक काव्य है जिसमें पाप एवं पुण्यका संग्राम दिखाया गया है। रामानन्द द्विजके इसी नामके एक नाटकका भी उल्लेख मिलता है।

वंशावली और चरित ग्रन्थोंका प्रचलन भी इसी समय यथेष्ट मात्रामें हुआ है। वंशावलियोंमें 'दरङ राज-वंशावली' प्रमुख है। राज-वंशके विवरणके साथ साथ सामाजिक और राजनैतिक अवस्थाओंका भी उल्लेख इसमें मिलता है। दरङ राज-वंशावलीका लेखक सूर्यखड़ि दैवज्ञ था। रविकान्त द्विजने राज-वंशावली ग्रन्थ लिखा। रामराय दासकी 'गुरु लीला', नीलकण्ठदासका 'दामोदर देव चरित', रामानन्द दास और श्रीराम अतुआ[illegible] 'गोपाल आतार चरित', रमाकान्त द्विजका 'अनन्ताली देवर चरित', रामानन्द द्विजका 'वंशीगोपाल देवर चरित', अनिरुद्ध द्विजका 'वैकुण्ठेश्वर चरित', विद्यानन्द ओझाका 'ठाकुर चरित' आदि विभिन्न वैष्णव धार्मिक गुरुओंकी जीवनियाँ इस समय लिखी गई थीं। ये सभी जीवनियाँ पद्यमें थीं। किन्तु गद्यमें लिखित एक बृहत् गुरुचरित भी इस समय प्राप्त है जिसका नाम है 'कथा गुरु चरित'। यह एक विशाल 'गुरु चरित' ग्रन्थ है जिसमें श्री शंकरदेव और श्री माधवदेवकी जीवनियोंके अलावा उस समयके वैष्णव आन्दोलनकी बहुत सारी जानकारियाँ भी प्राप्त होती हैं। असमिया मध्यकालीन गद्यका एक अच्छा नमूना भी इसमें प्राप्त होता है जिसमें देहाती समाजमें प्रचलित साधारण घरेलू भाषा व्यवहृत हुई है। इन ग्रन्थोंके अतिरिक्त कृष्ण भारतीका 'सन्त निर्णय', कृष्ण आचार्यका 'सन्त-चरित', संकलित रामचरण 'भक्त तत्त्वराम' आदि पद्य-गद्य ग्रन्थोंमें भी तत्कालीन वैष्णव सम्प्रदाय और वैष्णव भक्तोंका परिचय पाया जाता है। धर्म सम्बन्धी गद्यमें लिखित

परशुरामकी कथा चोपा में दासबोंकी टीका सात्वत तन्त्रका अनुवाद, रूपानन्द द्विजके पूर्ण भागवतका पद्य-पद्य अनुवाद पद्य पुराण नामक धार्मिक आचारोंका संकलित ग्रन्थ मार्बीया धर्मांका नीतिमतांकुर नामक ग्रन्थ भी इसी समय लिखा गया है।

धार्मिक और साम्प्रदायिक मतवादोंके विभिन्न ग्रन्थोंके अतिरिक्त इस कालमें सम्पूर्ण सांसारिक विषयोंपर भी असमियामें ग्रन्थ रचे गए हैं। इनमें बहुत सारे पद्यमें ही हैं और उनका अनुवाद भी हुआ था। वैषयिक विषयोंमें सर्वप्रथम असमिया गद्यका व्यवहार इन ग्रन्थोंके माध्यमसे हुआ है। इससे पहले केवल धार्मिक और साम्प्रदायिक विषयोंमें ही इसका साधारणतया व्यवहार होता था। काशीनाथका शंकर शास्त्री इस समयका उल्लेखनीय ग्रन्थ है जिसमें अंक गणितके अलावा जमीनकी पैमाइश और क्षेत्रफल निकालनेके नियमोंका उल्लेख है। सुखकरके श्री हस्तमुक्तावली नामक अनुवाद ग्रन्थमें अभिनयके समय प्रयोजनमें आनेवाली हस्तमुद्राओंका वर्णन है, जिसमें साथ-साथ मुद्राओंका चित्र भी दिया गया है। मूल संस्कृत श्लोकोंका उदाहरण के साथ अनुवाद दिया गया है। आहोम राज-रानी अम्बिकादेवीके आदेशानुसार सुकुमार बरकाठने हस्ति विद्यार्णव नामक ग्रन्थका प्रणयन किया। यह भी चित्रयुक्त ग्रन्थ है जिनका अंकन दिलबर और दोसाइ नामके दो चित्रकारोंने किया था। इसमें हाथीका वर्णन उसके रोग और निदान और उसको पालतू बनानेके तरीकोंका उल्लेख है। इसमें किस प्रकारके हाथीपर किस प्रकारके आदमीको चढ़ना चाहिए, इसका भी उल्लेख है। असमके शासकों द्वारा अधिक संख्यामें हाथीका उपयोग किए जानेके कारण ही इस प्रकारके अमूल्य ग्रन्थका प्रणयन उस समय हुआ था। घोड़ेके रोग और निदानके सम्बन्धमें भी 'घोड़ा-निदान' नामक ग्रन्थ लिखा गया है जिसमें घोड़ोंके प्रकारके बारेमें भी उल्लेख है। इस ग्रन्थके लेखकका अबतक कोई पता नहीं चला है। वैषयिक विषयोंपर लिखे गए कामरत्न तन्त्र नामक गोरखनाथके नामके साथ जोड़े हुए एक संस्कृत ग्रन्थका अनुवाद भी असमियामें हुआ। इसमें वनस्पति और औषधियोंके बारेमें उल्लेखके साथ-साथ शंकर द्वारा पार्वतीको अपने वशमें रखनेके उपायों आकर्षण स्तम्भन मारण आदिका विस्तृत वर्णन दिया गया है। हर गौरी सम्वाद' नामक दाम्पत्य-जीवन पर लिखा गया ग्रन्थ भी इस समय रचा गया।

इस कालमें सबसे महत्वपूर्ण साहित्य हुआ— बुरंजी साहित्य जिसमें आहोम शासनका धारावाहिक विवरण लिपिबद्ध किया गया है। यह इतिहास साहित्य असममें पहले पहल आहोम शासकोंने ही प्रारम्भ किया था और शुरूमें यह साहित्य आहोमोंकी अपनी जनजातीय भाषामें ही लिखा गया था। किन्तु आहोमों द्वारा असमिया जातीयता और भारतीय सनातन धर्म-ग्रहण करनेके बाद यह बुरंजी साहित्य असमिया भाषामें ही लिखा जाने लगा। यह बुरंजी साहित्य बड़ा विस्तृत है और आहोमोंके असमपर हुए बाद भी क्योंकि शासनका धारावाहिक वर्णन इसमें मिलता

है। यह बुरंजी साहित्य कई दृष्टिकोणोंसे महत्वपूर्ण है। पहली बात तो यह है कि देशका राजनीतिक इतिहास सिलसिलेवार प्राप्त होता है जो तत्कालीन अन्य भारतीय साहित्यमें नहींके बराबर है। दूसरी बात है कि इन बुरंजियोंके जरिए असमियोंमें एक प्रकारके राजनीतिक साहित्यकी सृष्टि हुई। तीसरी बात है कि असमिया गद्य साहित्यका एक सिलसिलेवार विकास इसमें मिलने लगा। चौथी बात है कि राजनीतिके अलावा सामाजिक सांस्कृतिक आर्थिक और धार्मिक वातावरणोंका लेखा-जोखा प्राप्त हो सका। पांचवीं बात है कि आहोमोंके साथ असमिया और असमकी सीमाओंपर बसी दूसरी उपजातियोंके सम्बन्धका परिचय प्राप्त होता है। असमिया भाषा-साहित्यके लिए इस बुरंजी साहित्यकी सबसे महत्वपूर्ण बात यह हुई कि एक सबल असमिया भाषाके निर्माणमें इसके द्वारा असमियेतर भाषाओंसे स्वतन्त्र अपने पथ और अभिव्यक्तिका ग्रहण किया गया। इसकी भाषा गम्भीर, घरेलू और अभिव्यंजनापूर्ण है।

बुरंजी साहित्यमें पुराण असमबुरंजी' ही सर्व प्राचीन माना जाता है। स्वर्ग नारायणदेव महाराज पर असमनाथ नामक ग्रन्थ असम बुरंजी नामसे प्रकाशित हुआ है। 'पादशाह बुरंजी' में आहोम-मोगलोंके सम्बन्धके बारेमें उल्लेख है। आहोम राजकर्मचारी हरकान्त बरुआकी असम बुरंजी श्रीनाथ द्वारका तुङ्खुङीया बुरंजी कछारी बुरंजी जयन्तीया बुरंजी त्रिपुरा बुरंजी असम बुरंजी और कामरूप बुरंजी अबतक प्रकाशित हो चुके हैं। आहोम राज्य-विप्लवके समय बहुत सारे बुरंजी ग्रन्थ नष्ट किए गए थे किन्तु अबतक प्राप्त प्रकाशित और अप्रकाशित बुरंजीसे यह कहा जा सकता है कि अब भी उनका विशाल साहित्य अवशिष्ट है।

इस प्रकार उत्तर वैष्णवकालका असमिया साहित्य अपनी स्वाभाविक प्रगतिके पथपर अग्रसर रहा है। भक्तिकालके बाद हिन्दी साहित्यमें जिस प्रकार रीतिकालीन ह्रासोन्मुख साहित्यका सृजन हुआ था कमसे कम विषयवस्तुकी दृष्टिसे असमिया साहित्यमें ऐसा नहीं हुआ बल्कि वैष्णव कालसे मुक्त होकर उत्तर वैष्णव कालमें असमिया साहित्य विभिन्न क्षेत्रमें उतर आया था और जीवनमें आवश्यक सभी विषयोंकी रचनाएं होने लगी थीं। इस कालमें एक प्रधान महत्वपूर्ण विषय है— पद्य-साहित्यका धीरे-धीरे ह्रास और गद्य साहित्यका विकास। असमिया भाषा साहित्यने स्वाभाविक रूपसे अबतक जो प्रगति की थी यदि यह धारा अबाध रूपसे आगे बढ़ी होती तो आजका आधुनिक असमिया साहित्य और ही प्रकारका होता। किन्तु ईस्वी सन् १८२६ में अंग्रेजोंका असमपर अधिकार होनेके पश्चात् असमिया भाषा-साहित्यमें जिस आकस्मिक [illegible] आविर्भाव हुआ उसके कारण स्वाभाविक विकास पचास साल पीछे हट गया।

[नोट—सन् १९०२ से आजतकके असमिया साहित्यका संक्षिप्त परिचय चौथी भाषा— असमिया—[illegible] दिया गया है।]

• • •

रघुनाथ चौधुरी

[कवि-परिचय]

रघुनाथ चौधुरी

• • •

जन्म तिथि व बचपन

असमके वयोवृद्ध कवियोंमेंसे श्रेष्ठतम विहगी कवि श्री रघुनाथ चौधुरी का जन्म २० जनवरी सन् १८७९, बुधवार, शुक्ला चतुर्थी गणेश पूजाके दिन कामरूप जिलेके (असम राज्यके) अन्तर्गत काजोपाड़ा नामक गाँवमें हुआ। उनके पिता स्व भोलानाथ चौधुरी एक धनी किसान थे और सच्चे अर्थोंमें वे भोलानाथ ही थे। चौधुरी जीकी माताका नाम दया लता चौधुरी था। वे भी अति स्नेहशील और धर्मपरायणा पत्नी थीं। चौधुरीजी अपने माता-पिता की तीसरी सन्तान हैं। उनके एक बड़े भाई और एक बहन थी।

कविके जन्मके दिन ही कुल-पुरोहितने आकर स्व भोलानाथजीसे कहा था—"तुम्हारे वंशका यह रघुनाथ है। रामचन्द्रकी तरह यह भी तुम्हारे वंशका नाम रोशन करेगा।" पुरोहितजीकी बात सच निकली। जन्म-पत्रिकाके अनुसार कविका नाम था—सोमनाथ चौधुरी। लेकिन पुरोहितजीकी भविष्यवाणीके साथ उनका दिया हुआ नाम भी लोकप्रिय हो चला। और आज कविको "रघुनाथ" नामसे ही सभी जानते हैं—"सोमनाथ" नाम तो जन्म-पत्रिकामें ही रह गया।

कविका बचपन बहुतही कष्टपूर्ण रहा। बरामदेसे लुढ़ककर गिरजानेके कारण दाहिना पैर हमेशाके लिए बेकार हो गया और बायाँ पैर भी बहुत कमजोर हो

गया। जब आप नौ महीनेके थे तभी यह दुखद घटना घटी। विधिकी कोपदृष्टि इतनेसे ही शान्त नहीं हुई। जब आप चार वर्षके थे तभी आपके दोनों भाई-बहन इस दुनियासे चल बसे। इस घटनाके एक महीने बाद ही आपकी माँ भी इस दुनियामें न रही। पिता स्व भोलानाथ चौधुरीजी पागल हो गए। सगे-सम्बन्धी और पड़ोसी सारी जायदाद बाँट लेनेकी कोशिश करने लगे। कविके दिन बहुत ही कष्टमय हो पड़े। जयरामदास नामक गाँवके एक सज्जनने उन्हें आश्रय दिया। भोलानाथजी चौधुरी जब स्वस्थ हुए, तब वे कवि चौधुरीको फिर अपने घर ले गए।

शिक्षा दीक्षा

आठ वर्षकी अवस्था तक वे चलने योग्य नहीं थे अत कवि चौधुरीकी प्रारम्भिक शिक्षा घरमें ही हुई। कविके परिवारकी अव्यवस्था देखकर भोलानाथजीके मित्र स्व बालकराम चौधुरीजी कविको अपने घर क्षेत्रिहारटियामें ले आए, और वहाँसे उन्हें बालकरामजीके पुत्र स्व धर्मराम चौधुरीके पास गोहाटी पहुँचा दिया। धर्मराम चौधुरी रघुनाथजीको अपनी सन्तानकी ही तरह मानने लगे। आज तक कवि इस घर और परिवारको अपना घर और परिवार ही मानते आए हैं।

असमके स्कूल और कालेजोंमें उस समय 'बंगला' भाषा प्रचलित थी। कवि रघुनाथ चौधुरी एक मिडिल स्कूलमें भर्ती कराए गए। पैरके दर्दके कारण नियमित रूपसे वे स्कूलमें हाजिर नहीं हो पाते थे। फिर भी कवि परीक्षाओंमें पीछे नहीं रहे। वार्षिक परीक्षामें वे सर्व प्रथम या द्वितीय स्थान हमेशा लेते ही थे। लेकिन एक दिनकी घटनाने कविको स्कूली-शिक्षा छोड़कर प्रकृतिसे शिक्षा लेनेको बाध्य किया। सातवीं कक्षाकी छःमाही परीक्षाके गणितके प्रश्नपत्रमें उन्हें दस नम्बर अधिक मिलना था। किसी कारण गणितके अध्यापकने वे दस नम्बर कविजीको नहीं दिए। चौधुरीजी उसके लिए आग्रह करने लगे तो गणितके शिक्षक और साथ ही प्रधान शिक्षकजीको भी नागवार गुजरा। कविके स्वाधीन मनमें विद्रोहकी चिनगारी जाग उठी। कवि चौधुरी भी भागकर तेजपुर पहुँचे। बादमें वे किसी तरह गोहाटी लौटा लाए गए। लेकिन अपने पिता और धर्मराम चौधुरीजीके समझाने-बुझाने पर भी वे स्कूल जानेको राजी नहीं हुए। कविके पिता स्व भोलानाथजीको यह बात बहुत ही बुरी लगी—और उन्होंने गुस्सेमें आकर कह दिया—"आजसे तेरा मुँह नहीं देखूँगा"। फिर भी कवि अटल रहे। अतः आठवीं कक्षासे ही कवि रघुनाथ चौधुरीकी स्कूली शिक्षाका अन्त हुआ।

कार्यक्षेत्र

बाल्यकालीन छात्रजीवन समाप्त होनेके बाद ही चौधुरीजीकी साहित्यिक साधना प्रारम्भ हुआ। वे अध्यापनके साथ-साथ अध्ययन भी करने लगे। नगरीजी

ही एक प्राथमिक कन्या पाठशालामें चौधुरीजी अध्यापनका कार्य करने लगे। कविके हृदयमें मानव शिशुओंके प्रति एक नवीन भावना जागृत हुई। शिशुओंकी भलाईके लिए "मइना" (मैना) नामकी एक पत्रिकाके सम्पादनका भार भी चौधुरीजीने अपने हाथमें ले लिया।

इसी बीचमें चौधुरीजीके पिताजीका भी देहान्त हो गया। संसारमें अब उनका कोई नहीं रहा। सभी एक एक कर कविको अकेला छोड़कर चले गए। चौधुरीजी पिताकी मृत्युके संतापसे अभिभूत हुए अतः उन्होंने गौहाटीसे बाहर तेजपुरमें ही रहनेका निश्चय किया। लेकिन बन्धुओंके आकर्षणने कविको वहाँ नहीं रहने दिया—बरबस उन्हें गोहाटी लौटना पड़ा।

गौहाटीमें आकर इसबार कवि सामाजिक कामोंमें जुट गए। खासकर संगीत-अनुष्ठान पुस्तकालय स्थापन पत्रिका-प्रकाशन आदि कामोंमें दिलचस्पी लेने लगे।

सन १९०१ में असमके एकमात्र सरकारी कॉलेज कॉटन कॉलेजकी स्थापना हुई। इस कॉलेजके उद्घाटन समारम्भमें कविजीने "आवाहन" नामक स्वरचित कविताका पाठ किया। प्रारम्भिक अवस्थामें लिखित 'आवाहन' कवितामें प्रकृति-संतान असम माताकी अपरूप प्राकृतिक सुषमावलीका वर्णन कविने किया था। कवि उस समय गोहाटीके प्रायः सभी संगीतानुष्ठानोंमें भाग लेते थे।

सन् १९ १ में स्व सत्यनाथ बराके सम्पादनमें "जोनाकी" नामक पत्रिकाको पुनर्जीवित किया गया और चौधुरीजी इसके सहायक सम्पादक नियुक्त हुए। स्व बराजीके सान्निध्य और "जोनाकी" के सम्पर्कमें आकर रघुनाथ चौधुरीजीकी साहित्य-स्पृहा प्रबल हो उठी। सन् १९०४ में कवि स्वयं कलकत्ता जाकर कागज आदि संग्रह कर लाए थे। लेकिन कुछ अनिवार्यकारण वश "जोनाकी" का प्रकाशन बन्द हो गया। फिर भी "जोनाकी" (जुगनू) ने असमिया साहित्यके एक युगकी सृष्टि की थी। सन् १८८९ में इसकी स्थापना स्व चन्द्रकुमार अगरवालाने कलकत्तामें की थी। सन् १९ १ में इसी "जोनाकी" में कविकी "मरमर परुवी (प्यारे पंछी) नामक कविता प्रकाशित हुई थी। यह चौधुरीजीकी कविताका प्रथम प्रकाशन था—पहली प्रकाशित कविता एक पक्षीको लेकर लिखी गई और अन्तमें चलकर उन्हें विहंगी कवि ही कहा जाने लगा। पंछीके जीवनको लेकर जितनी कविताएँ कवि चौधुरीजीने लिखी हैं—सम्भवतः किसी भी भारतीय भाषाके एक भी कविने उतनी कविताएँ नहीं लिखी होंगी।

जोनाकी के अतिरिक्त और कई पत्रिकाओंके सम्पादनमें भी आप सम्मिलित थे। सन् १९२३–२४ में जेलसे निकलकर आपने "मइना" नामकी बाल पत्रिकाका सम्पादन किया था। सन् १९२७ में आपके सम्पादनमें ही "बहनी" नामकी पत्रिका निकली थी। जोनाकी ने जिस तरह असमिया साहित्यमें

रोमान्टिसिज्म (Romantucism) का आलोक सम्पात किया था। ठीक उसी तरह जयन्ती ने हमारे साहित्यमें "आधुनिक कविता" का उन्मेष किया था। रोमान्टिक युगके एक श्रेष्ठ कवि होनेपर भी आधुनिक कविताको इस तरह प्रोत्साहन देकर कविने अपनी उदारता और प्रगतिवादी मनोभावनाका परिचय दिया है। असमिया भाषाके अधिकतर आधुनिक कवि जयन्ती पत्रिकाकी ही सृष्टि हैं। तीन वर्षके बाद जयन्ती भी बन्द हो गई। बादको कवि 'सुरभि' नामकी और एक पत्रिकाका सम्पादन करने लगे थे। पत्रिका सम्पादनकी यह अन्तिम प्रचेष्टा थी। लेकिन वे इसमें भी सफल नहीं हो पाए। तीन वर्ष चलकर, सुरभि ने भी असमिया साहित्य संसारसे विदा ले ली। फिर भी चौधुरीजी हतोत्साह नहीं हुए। आज ८४ वर्षकी इस वृद्धावस्थामें भी गौहाटी कविता सभा (एक साहित्यिक संस्था) के द्वारा एक उच्च कोटिकी पत्रिका सम्पादन की कल्पना ले कर रहे हैं।

पत्रिका सम्पादनकी तरह पुस्तकालयोंकी स्थापना करनेमें भी चौधुरीजीने उत्साह दिखाया। सन् १८९२ ई में पुस्तकालय स्थापित करनेका आपने पहला प्रयास किया। सन् १८९२ में इसे स्थाई रूप दिया—लेकिन सन् १८९७ के विराट् भूकम्पमें घर और पुस्तकें सभी भूगर्भमें विलीन हो गईं। सन् १९ ४ में पुस्तकालय स्थापनार्थ गौहाटी शहरमें एक आम सभा आपने बुलाई थी।

इन कार्योंको करते हुए भी कवि चौधुरीजी महामहोपाध्याय धीरेश्वराचार्य और मैथिली पंडित बालमुकुन्द झाके संसर्गमें आए और संस्कृत साहित्यका रसास्वादन करने लगे। उनकी कविताके उत्तम शब्दों द्वारा ही उनके अध्ययनशील मनोवृत्तिका परिचय मिलता है।

कविके जीवनमें चारों तरफ निराशाजनक परिस्थितियाँ भी रहीं। बचपनमें आप लँगड़े हो गए, भाई-बहन माता-पिता—एक-एककर सभी चल बसे। स्कूली जीवनका भी अन्त हुआ—शिक्षकोंके अविचारके कारण पत्रिकाएँ बन्द हो गईं। प्रबन्धके अभावसे पुस्तकालय विलुप्त हुए। स्कूलकी नौकरीमें भी यही अव्यवस्था रही। सन् १८९९ ई में असम सरकारने दो पाठशालाओंको बन्द कर दिया—एक थी महामहोपाध्याय पंडित धीरेश्वराचार्यजीकी मणिकूट आश्रमकी संस्कृत पाठशाला तथा दूसरा रघुनाथ चौधुरीके अध्यापनवाला बालिका स्कूल। महामहोपाध्यायजीने अपना वेतन बीससे पचास और चौधुरीजीने आठ रुपयेसे तीस रुपये करनेकी सरकारसे अपील की थी। सरकारने वेतन तो बढ़ाया ही नहीं वरन् स्कूल भी बन्द कर दिए।

इससे चौधुरीजीके मनको बहुत ही चोट पहुँची जिससे भविष्यमें सदा इस तरहकी स्वार्थपरायण मनोवृत्तिका वे विरोध करने लगे। असहयोग आन्दोलनसे लेकर असमके साम्प्रतिक भाषा आन्दोलन तक राज्यके सभी वैधानिक आन्दोलनोंमें चौधुरीजी-ने सक्रिय भाग लिया। फिर भी चौधुरीजी किसी भी राजनीतिक दल उपदलके

सदस्य नहीं बने। साहित्य और भारतीय संस्कृतिके एकनिष्ठ सेवकके रूपमें ही राष्ट्रीय और मानवीय स्वार्थ रक्षाके कारण उन आन्दोलनोंके साथ आ मिले। स्वाधीन चित्त उदार मनोभाव चिर सुलभ आवेग प्रवणता हँसमुख और मीठी बोली रघुनाथ चौधुरीजीके आकर्षक गुण हैं। सन् १९०५ से १९ ७ तक चौधुरीजी बेलतला ग्राममें खेती-बाड़ीमें जुट गए थे। कृषि जीवनके साथ ही उनके चिन्तनी मनको बढ़ावा मिला। सन् १९०८ में स्वदेशी आन्दोलनमें भाग लेने वे गौहाटी चले आए और छात्र-शक्तिके संगठन कार्यमें लग गए। उनकी आवेगमयी वक्तृतासे छात्र-शक्ति बहुत ही अनुप्राणित हुई थी।

सन् १९११ में जर्मन पादरियोंने गोहाटीमें एक माध्यमिक स्कूलकी स्थापना की। रघुनाथ चौधुरी उस स्कूलके एक शिक्षक नियुक्त हुए—लेकिन वहाँ भी आप ज्यादा दिन नहीं रह सके। सन् १९१४ के विश्व युद्धमें उस स्कूलके सभी पादरियोंको अँग्रेज सरकारने गिरफ्तार कर लिया। फलस्वरूप स्कूल बन्द हो गया। चौधुरीजी फिर बेकार हो गए।

कविजी निराश होकर फिर बेलतला लौट गए और खेती बारीमें ही ध्यान देने लगे। नौकरी जीवनकी विफलताने ही चौधुरीजीको हमारे सामने एक श्रेष्ठ कविके रूपमें लाकर खड़ा किया है। सन् १९१४ से १९२१ के दरमियान कविजीने जितनी कविताओंकी रचना की—असमिया साहित्य भण्डारमें वे सब एक-एक मोती स्वरूप ही हैं। शुद्धमनाके अज्ञातवास मिल्टनके 'होर्टन पीरियड' की तरह कवि रघुनाथ चौधुरीजीके सात वर्षके कृषि-जीवनसे उनके मनकी सुकुमार वृत्तिको अधिक पल्लवित और प्रस्फुटित किया। "बेलतला का मैदान" कविके लिए गवेषणागार सिद्ध हुआ। "केतेकी" "दहिकतरा" और "सादरी" आदि काव्य-ग्रन्थोंकी कविताएँ कविकी सूक्ष्म निरीक्षण-शक्ति निविड़ उपलब्धि गम्भीर कल्पना और मननशीलताका परिचय देती हैं। बेलतलाकी उर्वर भूमिमें जो स्वर्ण-बीज बोया गया था—उसीका स्मृति चिन्ह असमिया साहित्यके इतिहासमें अमर रहेगा।

सन् १९२१ में महामानव महात्मा गाँधीके असहयोग संग्राममें कविने भाग लिया। बेलतला गाँवके निवासियोंको स्वाधीनता संग्रामके लिए एकत्रित किया और अफीम बन्द करनेके हेतु सत्याग्रह आन्दोलन किया। इस अपराधमें सरकारने उन्हें गिरफ्तार किया और एक सालकी सख्त कैद की सजा दी। सन् १९२२ में वे जेलसे निकले और गोहाटीमें रहने लगे—यहीं आज भी रह रहे हैं। उसी समयसे लेकर आजतक कविजी गौहाटीके प्रायः सभी सामाजिक और सांस्कृतिक अनुष्ठानोंमें सम्मिलित रहे हैं। आपने कितनी ही सभाओंका सभापतित्व किया—कितने ही मानपत्र स्वीकार किए—उनका हिसाब देना कठिन है। चौधुरीजीकी कवि-प्रतिभाके प्रति आदर प्रदर्शितकर "कामरूप संजीवनी सभा" ने आपको "कविरत्न" की उपाधि दी है। भारत सरकारकी तरफसे भी उन्हें साहित्यिक पेंशन मिलती है।

सन् १९३६ में आप असम साहित्य सभाके सभापति पदके लिए चुने गए। विश्व-शान्ति समिति द्वारा कलकत्तामें सन् १९५२ में आयोजित अखिल भारतीय कृषि सभाका सभापतित्व कवि चौधुरीजीने किया था।

सन् १९५८ को उनकी कथा-काव्यकी पुस्तक "नवमल्लिका" प्रकाशित हुई। चौधुरीजी अब भी लिखते हैं और उनकी अप्रकाशित कुछ रचनाएँ अब भी प्रकाशनार्थ तैयार हैं।

कवि चौधुरीकी कविताका आदर असमसे बाहर भी हुआ। हालहीमें अमेरिकासे प्रकाशित विश्व-साहित्यके चुने हुए संग्रहमें कविजीकी "बहागीर बिया (बहागीकी शादी) नामक कविताको भी स्थान मिला। उनकी "केतेकी" नामक खण्ड-काव्यका अंग्रेजी अनुवाद भी छपकर निकला।

कवि आजीवन कुँआरे रहे। प्रकृतिको ही अपना सर्वस्व मानकर विवाह करनेका विचार उन्होंने नहीं किया।

कविजी अब अस्वस्थावस्थामें बिस्तरपर पड़े हुए हैं। फिर भी अनेक नवीन प्रवीण साहित्यिकोंका जमघट उनके बिस्तरके चारों तरफ लगा ही रहता है। दृष्टि शक्ति बिल्कुल नहीं रही। फिर भी बोलीसे ही आदमीको पहचान लेते हैं। असमिया तथा भारतीय साहित्यकी मान-गौरव बढ़ानेके लिए भगवान उन्हें दीर्घायु प्रदान करें।

कृतियोंका परिचय—

रघुनाथ चौधुरी अपने विद्यार्थी जीवनमें ही कविता करते आ रहे हैं और अभीतक उनकी साहित्यिक चेतना जागरूक है। उनकी प्रथम प्रकाशित कविता "मरमर पखी" सन् १९०१ को "जोनाकी" पत्रिकामें निकली थी। उनकी अबतक की रचनाएँ कालक्रमानुसार निम्नप्रकार हैं—

(१) सादरी (पहला कविता संग्रह)—सन् १९१
(२) केतेकी (खण्ड-काव्य)—सन् १९१३
(३) कारबाला अथवा महरम काव्य (अमित्राक्षर छन्दका काव्य)—सन् १९२३
(४) दहिकतरा (कविता संग्रह)—सन् १९३१
(५) नवमल्लिका (कथा कविता)—सन् १९५८

विश्व साहित्यके महान साहित्यकारोंके अन्तरंग और बहिरंग जीवनपर बाह्य वातावरणका प्रभाव अवश्य पड़ता है यह सृष्टिका नियम है तो भला चौधुरीजी कैसे बच जाते। चौधुरीजी असमिया भाषाके सुकुमार कवि हैं और उनके कोमल हृदयपर बाह्य वातावरणका प्रभाव पड़ता रहा है जिसकी अभिव्यक्ति उनकी कविताओंमें हुई है।

कविका जन्म प्रकृतिकी गोदमें हुआ था। ग्रामीण वातावरणमें कवि बड़ा हुआ। अपना कर्मक्षेत्र भी उन्होंने प्राकृतिक सुषमावलियोंसे भरे बेसननाको ही चुना था। प्रकृति निरीक्षणसे ही उन्हें कविता करनेकी प्रेरणा मिली थी। चौधुरीजीने स्वयं यह स्वीकार किया है।

यद्यपि चौधरीजीको स्कूली शिक्षा बहुत अधिक नहीं मिली—वे अंग्रेजी आदि भाषाके पण्डित नहीं हो पाए फिर भी वे चिन्तनशील एवं अध्ययन प्रिय रहे हैं। उन्होंने भारतीय दर्शन और संस्कृत काव्यका गम्भीर अध्ययन किया है। संस्कृत काव्यके अध्ययनके कारण ही उनकी कविता तत्सम शब्द-बहुला हुई है जिसमें अनुप्रासोंकी छटा देखने योग्य है।

कवि चौधुरीजी अपनी कवितापर दूसरे किसी भी कविकी विचारधाराका प्रभाव स्वीकार नहीं करते। उनका कहना है कि 'मेरी कविता गम्भीर अध्ययनका नहीं बल्कि सूक्ष्म अनुभूतिका ही फल है। मैंने प्राकृतिक रमणीय स्थलमें घूम-फिरकर प्रकृतिको जिस रूपमें देखा उसका ठीक वैसा ही वर्णन अपनी कवितामें किया है।"

सादरी और दहिकतरा (१९१०–१९३१)—ये दोनों कविता संग्रह हैं। पुस्तकके रूपमें सादरी ही कविका पहला प्रयास है। सादरीमें २८ और दहिकतरामें २५ कविताएँ संगृहीत हुई हैं।

इन दोनों संग्रहोंकी कविताओंको दो भागोंमें बाँट सकते हैं—(१) विहग जीवनसे सम्बन्धित और (२) [illegible] प्रकृति परक कविताएँ।

ब्रह्माण्डकी सभी चीजोंके सुख दुःखमें समभागी होकर सभीको अपना बनानेमें कवि चौधुरीजीकी तुलना किसी दूसरे भारतीय कविसे करना मुश्किल है। विहग जीवनको लेकर 'कपोती' 'दहिकतरा' 'साथावे ए बार मोर प्रिय विहंगिनि' 'केतेकी चराइ' 'मरमर पखी'—आदिके जरिये कविने एक निगूढ़ सत्य सबके सामने उपस्थित किया है। कविने "मरमर पखी" को प्यारसे स्नेहके सूत्रमें बाँधनेकी इच्छा की थी लेकिन उसने बन्धनको तुड़ाकर 'मरमर पखी' "हिम गो बन" (दूरके एक जंगल) की तरफ भाग गई। उसी दिन कविका हृदय दुःख-वेदनासे फटने लगा—आहें निकल आईं।

ए जीवन आरु नापाओं मि तुमि
मिलन माधुरी पार।

[इस जीवनमें मिलन माधुरी लानेवाला वह सुख फिरसे मुझे नहीं मिलेगा।]

फिर भी "प्रिय विहंगिनि!" की मीठी बोलीमें कविका अमर पुलकित हो उठा है। कविके लिए इस "प्रिय विहंगिनि!" के अमर स्वरसे वनके हिरण पवन कन्दराएँ, वनवासिनियाँ सब मानों उन्मत्त हो उठे थे। उसी स्पन्दन जैसे आज मानव हृदयमें भी आशा आकांक्षाका स्पन्दन भर दिया है—

मर्त्यवासी मानवक दियर्ने मुरुनि
सोमाईल प्रिय मिथि
पठियाइ दिले मिथि
स्वर्गीय शुतर येवे कण्ठे सुधा मानि।

[मर्त्यवासी मानवको शान्ति देनेके लिए अमृतवाणी लेकर इसके वेशमें स्वर्गसे विधाताने शुभ्र पंखी अनमोल मिथिको भेजा है।]

यही शुभ्र पक्षी जैसे शान्तिका स्तूप है और शान्तिवाणीका प्रचार करनेको ही पृथ्वीपर आया है। कविकी भी इच्छा है उस पक्षीके साथ शान्ति खोजते हुए उड़ जाए—

न लागे पार्थिव सुख
नकरों जगत दुख
सोमाइ तयतै उरि यामों विहंगिनि।

[मुझे पार्थिव सुख नहीं चाहिए, दुःखी भी मैं नहीं होऊँगा। ओ विहंगिनी मैं तुम्हारे साथ ही उड़ चलूँगा।]

"वहिश्चरा" के सम्बन्धमें असमिया भाषाके तत्ववेत्ता प्रसिद्ध आलोचक स्व. डॉ. बाणीकान्त काकतिजीका कहना है—

स्वरूपविहीन मानसमोहिनी जीवन तोषिणी प्रिय विहंगिनी आदिमें कविने मिलन मन्त्रका जाप पूरा है। जगतको मिलन आशासे आप्यायित कर 'वहिश्चरा' के माध्यमसे बड़ कैवल्यमय इस जगतसे पाठक के मिलन करा देनेका उपक्रम भी आपने किया है। यह एक कामसंभविहीन प्रेम कविता है जिसमें दूसरोंकी दृष्टिमें ओझल-रहनेवाला यह शुभ्र पक्षी कविके सामने मूर्तिमान हो उठा है—

कवि लेखनीत तदि सुस्फिति प्रिय
रूप तोर नाइ देखि
अनागुना हृदिलेहि
तनि थीय समतर अति सुर थीय
किन्तु मिले तये मेर अति प्राण प्रिय।

[कविकी लेखनीमें तू क्यों नहीं आई? तेरा रूप नहीं है—और धीय अमरमें अति सुर थीय होनेके कारण ही क्या तू अनागुना हुई है? लेकिन मिले—तू मेरी प्राणप्रिय है।]

इसीमें कविता अद्भुत प्रतिभासित हुआ है। कवि चाहते हैं—संसार द्वारा अवहेलितोंके बीच जाने अनुभूतिशील आत्मको स्पोज्जवल करना। गौहाटी विश्वविद्यालयके कलाप्रमुख (Dean of faculty of arts) डॉ. विरिंचि कुमार बरुवाजीने इसीलिए कहा है—"Nature which, up till now had served only as a decorative background, has been

chosen, as a subject of poetry, for its own sake" "दहिकतरा" की तरह अपने अन्तरकी कोमलता और पवित्रतामें विमुग्ध करनेकी इच्छा कविने की है। दहिकतराके स्पर्शसे ही "बुढ़ा आमार" (बूढ़ा आमार वृक्ष) का आलस्य मिट गया। दूसरी तरफ "शिरीष" वृक्षकी यौवनोन्मत्तताके कारण शरीर क्षीण हो गया है। दहिकतरा की उपस्थितिमें ही फल-फूल पेड़पौधे और पक्षी आदि सभीमें आनन्दकी हिलोर उठने लगी है—

देखाइछे प्रणयर आलेकी विपुल
यति चाओं तैति येन नतुनोनतुन।

[तूने प्रणयका निर्मल आदर्श दिखाया है। जिस तरफ देखता हूँ—नया ही नया नजर आता है।]

"केतेकी चराइ" नामकी एक छोटी कवितामें कवि आनन्द विभोर हो उठा है। इसकी हास्य और व्यंगमयी शैली कठोर संसारमें आशाका संचार करती है। कवि इसकी पक्षीको जन्म जन्मान्तर के लिए अपना बनाकर पालनेके लिए सोच रहा है। कीट्सके ओड-काव्यमें इस छोटीसी कविताकी भावनाका ही पूर्ण प्रकाश सबल दिखाई पड़ता है।

रघुनाथ चौधुरीका सही परिचय मिलता है—उनकी प्रकृति परक कविताओंमें। प्रकृतिके साथ कविका अति निकटका सम्बन्ध है। कविकी लेखनीमें प्रकृतिको यथार्थ प्रथम सार्थकता मिली है। प्रकृतिकी वेश-भूषाके जरिए ही "विषाद मलिना" "दीना-हीना" जननी जन्मभूमिके लिए आनन्ददायिनी ऐश्वर्य थोड़ीसी करुणाकी भिक्षा माँगी गई है—

आहाहे जननी रत्न सिंहासनी
बिलाहि आनन्द शान्ति

[हे रत्नसिंहासनी जननी—आओ और आनन्द शान्ति प्रदान करो।]

बहागीर बिया" (बहागीका विवाह) कवितामें मानव संसर्ग विहीन प्रकृतिके आनन्दोत्सवका वर्णन है। बसन्त पुहिता बहागीके विवाहके उत्सवमें वृक्ष लताएँ और पक्षी आदि सभी आत्म- विभोर हैं। बहागीके विवाहको केन्द्रमें रखकर प्रकृतिके सौन्दर्यका विकास करना ही कविका उद्देश्य है। साथ ही इस कविताके जरिये असमिया जातीय जीवन और ग्रामीण जीवनकी एक झाँकी प्रस्तुत की गई है। मनुष्य प्रकृतिके बीच रहनेका स्वाभाविक प्रमाण मिला है और इस बिन्दुमें आनन्दका एक परिपूर्ण रूप "बहागीर बिया" में उपलब्ध है।

"फल्गु" कवितामें स्पष्टप्रकट फल्गु के जीवनका विश्लेषण करके कविने मानव यौवना फल्गुकी गातीमें सरस जीवनकी प्रशान्ति खोजी है। "विश्व" कवितामें कवि विश्व-ब्रह्माण्डकी विविध कार्य प्रणाली पर विस्मित है। "वशिष्ठाश्रम" में संध्या-वर्णिता और कामाख्याकी हुम् हुम् ध्वनिके साथ प्रकृतिका मनोहर रूप

देखकर प्राचीन भारतकी गौरव-गाथाको स्मरण कर, समयकी गतिसे अविरल 'बविष्ठो भ्रम" को एकमात्र पथिकके शान्ति-निकेतनकी आख्या दी है। ब्रह्मपुत्रके किनारे हरे-भरे जंगलोंमें सुशोभित "गिरिमल्लिका" ने कविके हृदयमें आनन्दमयी भावनाओंका उद्रेक किया है। कविने भी गिरिमल्लिकाके स्पर्शसे प्राण परिपूर्ण करनेकी अभिलाषा प्रकट की है।

प्राणप्रिय आजि मोर विजन कुंजत
तुलिबाने लगलाहे हाँहिर तरंग।

[प्राणप्रिय आज मेरे विजन कुंजमें हँसीकी तरंग उठाओगे क्या ?]

प्रकृति परक कविताओंके अतिरिक्त कविके इन दोनों संग्रहोंमें कुछ वैराग्य मूलक कविताएँ भी मिलती हैं। इन कविताओंके जरिए कविकी अपनी जीवन गाथा ही अप्रत्यक्ष रूपसे प्रकाशित हुई है।

सापरी की पहली कविता "भिक्षा" में ही कविकी वैराग्य भावना अङ्कुरित हुई है। कविने जीवनके पहले स्तरमें सम्भवत बड़ी बड़ी आशाएँ की थी लेकिन वे सभी निष्फल हो गईं। अत कवि संसारके सभी आशा-सुख शान्ति-प्रेम वासना राजपद-सम्मान गौरव आदिका आज परित्याग कर रहे हैं। मायावी मृगतृष्णाकी तरह इन सब चीजोंको खोजते समय उन्हें दुःख-ही-दुःख मिला और इसलिए उन्होंने भिक्षाकिकी कामना को दूर भगाकर दुख-दैन्यको भगवानकी देन समझ लिया है। साथ ही भगवानसे प्रार्थना की है—

शिलार देखार दरे तोमाते सदाय
थाके मन अचल विश्वास।

[पत्थरकी लकीरकी तरह ही तुममें मेरा अविचल विश्वास रहे।]

संसार सम्बन्धी इस तरहके मनोभाव "सापरी" की बनिजर कथा (बनियेकी बातें) निराशा विषाद विप्रहीर उक्ति (विप्रहीकी उक्ति) संताप आदि कविताओंमें मिलते हैं।

जीवनमें शान्ति चाहते हुए कविने अन्तमें 'मरण' का आह्वान किया है—

दिबा रूप-धरि तुमि दिबा मोक देखा
सिदिनाहे पाबो मोर लाभिब सान्त्वना

[जिस दिन रूप धरकर तुम (मरण) मुझे दर्शन दोगे उसी दिन मुझे सान्त्वना मिलेगी।]

"दहिकतरा" में कविकी जीवनके प्रति तीव्र वेदना तथा संसारके प्रति वैराग्य भावना गम्भीर रूपमें स्पष्ट है। संसारमें कविको दुःख-यन्त्रणाएँ ही मिली। उसने जो चाहा था उसे नहीं पाया। और क्या उसकी कल्पना या त्रिपताओंने भी आँखें उठाकर नहीं देखा। इसलिए कवि अपनेको भाग्यहीन समझकर दुःख प्रकट करते हैं—

विफल जीवन मोर विफल सकलो आशा
भाग्यहीन आजि मइ हिया मोर कर्मनाशा

[विफल जीवन मेरा विफल हैं सभी आशाएँ। आज मैं भाग्यहीन हूँ और मेरा हृदय कर्मनाशी है।]

कविका वैयक्तिक जीवन भी विषम और वेदनामय ही कहा जा सकता है। बचपनमें पै एकी दुर्घटनाएँ हुई—किशोर जीवनमें उन्हें माता पिता एवं भाई-बहनोंसे विछोह हुआ तथा सारा जीवन कुँवारा रहकर ही बिताना पड़ा। कविने इस जीवनकी बात "वैराग्यर कथा" कवितामें स्पष्ट कही है—

आशा पखी उरि गल शून्य हिया परिरल
संसारत आजि मइ अकलशरीया

[आशा रूपी पक्षी उड़ गया—शून्य हृदय पड़ा हुआ है। संसारमें आज मैं अकेला हूँ।]

कविकी इन भावनाओंने तीव्ररूप धारण किया है "वहिकलरा" की अन्तिम कविता "फुलशय्या" में चिताग्नि ही मानो उनके लिए फूलकी शैय्या है—

सेये मोर फुलशय्या रक्तकमलर
तात लाभे अनन्तशयन।

[वह रक्त कमलोंकी मेरी फूलशैय्या होगी वहीं मैं अन्तिम शयन करूँगा।]

बावरीकी "मरण" कविताकी तरह वहिकलराकी "फुलशय्या" कवितामें संसार विरागी कविने एक ही इच्छा (मृत्यु कामना) प्रकट की है।

कुल मिलाकर इन दोनों संग्रहोंको असमिया साहित्यके श्रेष्ठ कविता संग्रहोंमें गिना जा सकता है।

कारवाला—कवि चौधुरीजीका यह पहला खण्ड काव्य है।

कारवाला सन् १९२१ में कर्मवीर नवीनचन्द्र स्मृति ग्रन्थावलीके प्रथम अंजलिके रूपमें प्रकाशित हुई।

'कारवाला' काव्यमें कवि चौधुरीजीने इसलाम धर्मकी प्रसिद्ध एक ऐतिहासिक वियोगान्तक कहानीको निरुपम चित्ररूप दिया है। "कारवाला" महात्मा हजरत मोहम्मदके खानदानकी अन्तिम ख्याति हुसेनके तप्त रक्तसे रंजित है। दमिस्क अधिपति पापात्मा एजिद इसलाम धर्ममें एक नायकत्वकी प्रतिष्ठा कराने और इमाम वंशको निर्मूल करनेकी जी-तोड़ कोशिशमें लगा था। साथ ही उसने सुन्दरी जुबेदाको अपनी अंकशायिनी बनानेकी कल्पना भी की। षड्यन्त्र कर जुबेदाके द्वारा ही महात्मा हुसेनका वध करना चाहा। प्रलोभनसे प्रमुग्ध होकर जुबेदा मानने लगी—

हम राज राजेश्वरी
बप्पाहु एजिदर राजभवनत
एने रमण तुमि नोवारो एरि।

[मैं बादशाह एजिदके राजभवनमें राज राजेश्वरी होऊँगी। इस तरहका स्वर्ग सुख छोड़ नहीं सकती।]

लेकिन कुबेराको अन्ततक राजभवन नहीं मिला। एजिदने कुबेराको नहीं अपनाया वरन् स्वामीकी हत्यारिणी पापिनी कुबेराके दो टुकड़े अपनी ही तलवारसे कर दिए।

पापियसी बामोबाक करि मुंड छेद
पापर कि परिणाम स्वर्णत उपमा
देखुवाले समाजक चमक लगाइ।

[पापिनी कुबेराका मुंड छेदकर पापका ज्वलन्त परिणाम दिखाकर समाजको चकित कर दिया।]

इमाम वंशमें फिरसे आपदाएँ नहीं आईं। जयेबुन्नाका आश्वासन पाकर इमाम परिवार मदीना छोड़कर शान्तिकी खोजमें कूफाके लिए रवाना हुआ। लेकिन मार्ग भूलकर वे कारबालाके मरु प्रान्तमें आ पहुँचे। दूसरी तरफ फोरात नदी पर एजिदके सैनिकोंने अवरोध कर लिया था। अतः सारे शिविरमें पानीके लिए हाहाकार मच गया। हुसैन पुत्र पानी लाने गये लेकिन वापस नहीं आ सके चूँकि शत्रुके सैनिकोंके बाणोंसे वे वहीं स्वर्ग सिधार गये थे।

सरपर सुशीतल जलपान करि
सरपर बासु मन स्वर्गधामर्ग।

[स्वर्गका सुशीतल पानी पीकर स्वर्गके निवासी स्वर्गधाम चले गए।]

इस दुःखद घटनाके उपरान्त भी कुछ क्षणोंके लिए हुसैनके शिविरमें आनन्दकी दुन्दुभि बजने लगी। उनके अन्तिम अनुरोधके अनुसार कासिम और सकिनाकी शादी हो गई।

युद्धमें एक एक कर सभी चल बसे। बादको इमाम हुसैन स्वयं शत्रुओंके हाथोंसे फोरातके किनारेको उन्मुक्त करानेके लिए आगे आए। शत्रुओंको पराजित करता हुआ फोरात का पानी-पीने हुसैन आगे बढ़ने लगे। लेकिन उनकी आँखोंके सामने इस पानीके लिए जीवन देनेवाले आत्म परिवार और इष्ट कुटुम्बियोंकी छवि उभरने लगी—

एबुंदि पानीर लागे कत शत प्राणी
आत्म परिजन और मित्रिर कुटुम
एरितो जीवन एइ जीवन व्यस्त

[एक बूँद पानीके लिए सैकड़ों लोगों जिनमें ही आत्मीय परिजनों और इष्ट कुटुम्बियोंने इस मरुभूमिमें प्राण दिए हैं।]

हुसैनके जीवनको सैकड़ोंकी कम और बढ़ने घेर लिया। अस्त्र-शस्त्र त्याग, ...रण नमीरो उपाड़ फेंक अल्लाहके चिन्तनमें जीवनकी समाप्ति खोजने लगे।

इसी स्वर्ण अवसरपर लक्ष स्वर्ण मुद्राका लोभ दिखाकर एजिदने चिमारको हुसैनका कटा हुआ सिर लानेके लिए भेजा। स्वर्गसे हजरत मोहम्मद हुसैनको ले जानेके लिए खुद उतर आए—

हजरत महम्मद स्वर्गलोक हन्ते
शिष्य सह आविर्भाव विमान पथत
नेवेहुर दौहित्रक लै यावलइ।

[हजरत मोहम्मद देवलोकसे अपने शिष्योंके साथ अपने प्यारे मित्रको ले जानेके लिए आकाश मार्गपर उपस्थित हुए।]

यानी चिमारके हाथमें इमाम हुसैनकी हत्याके समयकी यादमें इस्लामी लोग मुहर्रम व्रतके रूपमें मनाते हैं।

कवि चौधुरीजीने इस्लाम धर्मकी प्रसिद्ध कहानीको चलचित्रकी तरह अपने काव्यमें अंकित किया है। मनोरम कहानी कविकी लेखनीमें और भी मनोरम होकर निखर उठी है। आलोचककी भाषामें "हृदय का तप्त रक्त देकर इसे आपने सजीव बनाया है।"

ब्रह्मपुत्र तटके दृश्योंको देखकर ही उनके आधारपर कारबाला मरुभूमिका जैसा काल्पनिक चित्र चौधुरीजीने खींचा है वह बहुत ही आश्चर्यजनक है। कविका कृतित्व इसीमें है।

इस्लाम धर्मकी कहानी लिखते हुए भी कविके इस काव्यमें विदेशी शब्दोंकी भरमार नहीं है। सम्पूर्ण काव्यमें कुल केवल सतरह विदेशी-शब्दोंका व्यवहार किया गया है। शुद्ध असमिया शब्दोंका प्रयोग उनकी काव्यशैलीकी एक खास विशेषता है।

केतेकी—

केतेकी कविके जीवनकी सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि कही जा सकती है। किसी एक पक्षीको लेकर इस तरहके खण्ड-काव्य दूसरी भाषाओंमें बहुत ही कम मिलेंगे। इस काव्यके सम्बन्धमें डॉ॰ शास्त्रीजीने कहा है—"बहागीर चिरा" में जो आनन्दानुभूति अभिव्यक्त और पक्षी जीवनमें ही सीमित थी केतेकी कवितामें उसीने कूल किनारा तोड़ मरोड़कर मानव समाजके वरन् जीवनको भी प्रभावित किया है। केतेकी के आगमनसे जड़ चेतन जगतमें नव जीवनका संचार हुआ है और चारों तरफ आनन्द ही आनन्द परिव्याप्त है।

पाँच तरंगोंमें विभक्त केतेकी काव्यकी प्रथम तरंगमें अनजान और अज्ञात देशसे आकर आकुल और उदात्त स्वरसे गीत गा गाकर विभोर हो घूमते फिरते केतेकी पक्षीको देखकर कवि आश्चर्यचकित हैं। उसी पक्षीने जैसे दो ही दिनोंमें सभीको अपनाकर "जनप्राणीहीन रेगिस्तानमें" भी संजीवनी ला दी है—

सजाइ धुलिलि अमर भूमिक
अपरूप मरुद्यान।
[अमर भूमिको भी तुमने अपरूप मरुद्यानका रूप देकर सजाया।]

कवि इस संसारके टेढ़े-मेढ़े रास्तेपर दुख-दैन्यके बीच केतेकी पत्नीके जीवनकी स्वर्गीय प्रेम-प्रीति और उसका सुख देखकर विस्मित है। मानवकी कामरता और काम क्रोधसको धिक्कारते हुए पत्नीकी स्वर्गीय प्रेम प्रीति को कविने सिर नवाया है।

द्वितीय तरंगमें 'केतेकी' के आगमनसे प्रकृति राज्यमें किस तरह अपूर्व ज्योति आ गई है इसीका वर्णन हुआ है। केतेकी ने जड़ताके आवरणको भेदकर प्रकृतिमें नव चेतनता ला दी है। गीतके स्वरोंसे अनुभूनित भुवनमोहिनी चन्द्रिमामयी निशा तारोंके आगमनसे और अधिक ज्योतित हो उठी है—

केनेमो विभुवन पूर्णिमार निशा
जगत् ज्योत्स्नामय
तोर गातेमेन मर्त्य भुवनत
अमृतर धारमय।
[कैसी ज्योत्स्नामयी यह पूर्णिमाकी रात है। तेरे स्वरने जैसे इसी मर्त्यलोकमें अमृतकी धार बहा दी हो।]

तृतीय तरंगमें केतेकीके आगमनसे कविके अन्तरमें जो हिलोर उठी है उसकी तुलना उन्होंने अतीत कालके कण्व आश्रम देवी शकुन्तलाके जीवनके अभिज्ञानसे की है। शकुन्तलाके जीवनके नैराश्य और अवसादके क्षणमें मानो केतेकीका मधुर स्वर ही था। सती मय ऊषा अनिरुद्ध दमयन्ती आदिके जीवनके हर्ष और विषादके क्षणमें भी उसीके गीतका स्वर ही रहा है।

चतुर्थ तरंगमें केतेकी में ही एक चिरंतन सत्यका सन्धान मिला। केतेकीके आगमनसे विश्व ब्रह्माण्डमें नवचेतना और प्रेमका अंकुर अंकुरित है। महाविरहको आलोड़ित करनेवाली उस विहगिनीसे कविने ही महाशान्ति और मृगतृष्णाके हेतु थोड़ी-सी करुणा की याचना की है। कवि व्याकुल हो उठा है—

नाजानने धनि तोर ति संगीते
कांड़ि निले मोर प्राण
× × ×
आह देखाइ लाह या सांतति
नाचाको हु संसारत
[क्या तुम नहीं जानती हो कि तुम्हारे ही संगीतने मेरे प्राण हर लिए हैं। मैं इस संसारमें नहीं रहूँगा। तुम मुझे पथ दिखाकर ले चलो।]

अन्तिम तरंगमें जब केतेकी मर्त्यका मोह छोड़कर उड़ती हुई दूर निलयमें चली गई तब कविका अन्तर दुख निराशासे भर उठा—

किय गुचि गलि दूर देश लई

मायाको एरिलों तयो एरि गलि
कि बताय हब मोर

[तुम दूर देश चली गई   मैंने तुम्हारे ही कारण संसारकी मायाको त्यागा—तुम भी चली गई—अब मेरी क्या दशा होगी ?]

'केतेकी' कविता कविकी आकस्मिक रचना नहीं है। यह 'सादरी' कविता संग्रहमें प्रकाशित पक्षी विषयक कविताओंका ही विकसित रूप है। कविकी पहलेकी कविताओंमें जितने प्रश्नोंका उदय हुआ था उसीका कवित्वमय उत्तर 'केतेकी' कवितामें मिलता है। "कवि जीवनके बहु काल संचित भावनाओंका क्रमविकास चौधुरीजीकी पक्षी-विषयक कविताओंको छोड़कर असमिया साहित्यमें और कहीं मिलना मुश्किल है।

नवमल्लिका–(१९२८) यह कवि चौधुरीजीकी अन्तिम रचना है। अन्तिम रचना होनेके नाते कवि-जीवनकी गम्भीर उपलब्धियाँ इसमें मिलती हैं। यह उनकी कथा-काव्योंका संग्रह है। प्रकृतिके साधारणसे साधारण विषयको लेकर कविने ज्ञान-गम्भीर तत्त्व इनमें समेटा है। असमिया भाषामें कथा कविताका यह दूसरा संग्रह है।

भाषा-शैली—

चौधुरीजीकी दृष्टिमें भाषा संसारका नादमय चित्र है। चौधुरीजीकी भाषामें तत्समता लाक्षणिकता चित्रमयता संगीतात्मकता आदि अलंकृत हैं। चौधुरीजीकी भाषामें तत्समताके साथ-साथ संगीतात्मकता भी होनेके कारण उनकी कविताएँ पढ़नेसे ऐसा मालूम पड़ता है कि एक वेगवती सरिता धीर, स्थिर, गम्भीर गतिसे निनाद करती हुई बह रही हो।

चौधुरीजीकी भाषा चित्ररंजित भाषा है जिसमें अनेक शब्द-चित्र अत्यन्त सुन्दर हैं। इसका एक उदाहरण—

दोपालि शिखर येवे रँजि सन्ध्यारागे
सुखेरे विश्राम लभे सौम्य नभोमणि।

[दोपहरि शिखरपर जब रंजित हो संध्या रागसे सुखसे विश्राम लेते सौम्य नभोमणि।]

चौधुरीजीकी भाषामें अनुप्रासका प्रयोग अधिक देखा जाता है। इसीलिए पद-पदपर अनुप्रासकी छटा देखनेको मिलती है। इसका एकमात्र कारण है उनकी संगीत-प्रियता।

रघुनाथ चौधुरीजीकी भाव प्रकाशन शैली सरल और प्रांजल है। असमिया और भारतीय अन्य आधुनिक काव्य-साहित्यका अध्ययन कर विशेषकर भी दाशरथेय और कालिदासकी काव्य-कलासे आप प्रभावित हुए थे और उन लोगोंकी रचना पद्धति

और शैलीको ही कविने अपनी रचनाओंमें अपनाया है। छवि तुलरी पद पयार आदि असमिया छन्द कालिदासकी मन्दाक्रान्ता अमिताक्षर और मिरिक आदि छन्दोंके धरिए कवि चौधुरीजीकी काव्यमयी आत्मा विकसित हो उठी है।

साहित्यमें कविका स्थान—

कवि चौधुरीजीके सम्बन्धमें असमिया साहित्यके कुछ प्रख्यात आलोचकोंका मन्तव्य इस प्रकार है—

डॉ. बाणीकान्त काकतिजी एम ए पी एच डी लिखते हैं—मुरझाई हुई अपनी भावनाको जगाकर भावोंके हिलोरोंमें झूमनेसे जो आनन्द प्राप्त होता है—वही आनन्द कविता देती है। चौधुरीजीकी कवितामें वह आनन्द देनेकी शक्ति विराजमान है।

असमिया कविताकी कहानी में डॉ. महेश्वर नेओगजी लिखते हैं—"चौधुरीजीने पक्षी जीवनकी छन्दमयी कल्पनाका संधान करते हुए प्रकृति परक कवितामें एक अभिनव तात्पर्यका आरोप किया है और उससे ही स्वकीय प्रतीकात्मक विचार साकार कर दिया है। कालिदास आदि कवि पुरुषोंके मानसिक परिवेश चित्रकल्पित भाषाके सौन्दर्यका प्रभाव मानते हुए भी उन्होंने आधुनिक गीति-काव्यको परिपुष्ट और अलंकृत कर रखा था।

"असमिया साहित्यके इतिवृत्त" में डॉ. सत्येन्द्र शर्माजीने लिखा है—"पौराणिक आख्यानके साथ संयुक्त करते हुए चित्र रूपकका समावेश कर भावोपयोगी मन्दाकिनीके व्यञ्जनापूर्ण प्रयोगने उनकी कर्मण शैलीको उज्ज्वल और हृदय ग्राह्य तथा चित्तोरम कर दिया है।

"केतेकी" के सम्बन्धमें साहित्य सम्राट् लक्ष्मीनाथ बेज बरुवा जीने लिखा था—"हम "केतेकी" को ही लेकर हम विश्व-साहित्यके दरबारमें जा सकेंगे।"

असम न्यायालयके भूतपूर्व न्यायाधीश श्री हरिराम मेधीजीने चौधुरीजीकी कविताके सम्बन्धमें दो ही समालोचक वाणीमें ही कहा है—

"His lines are chilled for immortality—"

इन्हीं समालोचकोंके अनुसार निस्सन्देह यह कहा जा सकता है कि चौधुरीजीकी कविता असमिया रोमान्टिक साहित्यका उज्ज्वल नगीन है। उनकी कविता ध्यानमग्न योगीकी आजन्म साधना की वाणी है।

केवल असमिया साहित्यमें ही नहीं भारतीय साहित्यमें भी चौधुरीजीका योगदान इसीलिए स्मरणीय रहेगा कि विहगोंके कलरवका उन्होंने सुस्पष्ट वाणी प्रदान की है—उनके कण्ठोंमें रागिनीका सञ्चार करके ही वे तृप्त नहीं हुए वरन् जीवनकी मार्मिक अनुभूतियोंका सजीव चित्र अत्यन्त मनोहर बनाकर उनमें सन्निविष्ट कर दिया है। हरेक कवितामें तन्मयताका भाव ही प्रधान है। यों देखा जाए तो परिमाणकी दृष्टिमें कविकी रचनाएँ कम हैं—परन्तु उनका भावात्मक सौन्दर्य और झंकारमयी पद-योजना उन्हें श्रेष्ठतम कवियोंकी श्रेणीमें पहुँचा देनेके लिए पर्याप्त है।

रघुनाथ चौधुरी

[काव्य-सञ्चय]

१ भिक्षा

मासागे तोमार प्रभु एश्वर्य विभूति
राजपद, सम्मान गौरव
बारिजपर माथोमोटा भिक्षार समुलि
सेपे मोर अतुल वभव ॥१॥

ममओं छिहित औरि सन्भ्रमर माला
माबों ताक अति हेय बुलि,
अपमान अपयश, लाछना ज्ञिरत
मम प्रभु मापहरे तुलि ॥२॥

उच्चाकांक्षा माइ प्रभु, शुभ हृदयत
करा मोक सकमोरे सव
माज पथारत मेने थाके अकलाइ
पत्र पुष्प फलहीन तरु ॥३॥

मासागे तोमार प्रभु पार्थिव सम्पद
दुबिनोपा सुधर माहामि
अकसारोपा करि माज माटतेइ
एरि थइ याय मा काहामि ॥४॥

मासागे सुन्दर देह कान्ति कमनीय
सुम-पथ, आमन्द विमास
रूपर छलना मात्र मोहर विकार
सिबोरत माइ अभिमाप ॥५॥

पिनाघिनो कामनाक छिछों मातराइ
ताइ मोक दिटे बहु दुख
शरीर शियरि उठे परिते ममत
रासतोर भवाचार मुख

१ भिक्षा

हे प्रभु, तुम्हारा ऐश्वर्य विभूति राजपद सम्मान गौरव मुझे नहीं चाहिए। दरिद्रताका भिक्षापात्र ही मेरा अतुल वैभव है ॥१॥

संयमका कण्ठहार मैं अत्यन्त तुच्छ समझता हूं। (अत उसे) गले नहीं लगाऊंगा। अपमान अपयश लांछना बड़े आग्रहके साथ शिरोधार्य कर लूंगा ॥२॥

मेरे इस क्षुद्र हृदयमें उच्चाकांक्षा नहीं है। मुझे सबसे छोटा बना दो। उसी तरह जसे मदानके बीच पत्र पुष्प फलहीन वृक्ष अकेला खड़ा रहता है ॥३॥

हे प्रभु दो दिनके सुखकी सामग्रियाँ या तुम्हारी पार्थिव सम्पदा मुझे नहीं चाहिए। क्योंकि ये सभी बीच रास्तेमें ही मुझे अकेला छोड़कर कभी-न-कभी चली जाएँगी ॥४॥

मुझे सुन्दर शरीर कमनीय कान्ति दाँव-पेंच आनन्द विलास नहीं चाहिए। ये सभी मोहके विकार हैं—रूपकी छलनाएँ मात्र हैं—उन्हें पानेकी मेरी अभिलाषा नहीं है ॥५॥

पिशाची कामनाको मैंने बहुत दूर भगा दिया है। उसने मुझे बहुतसे दुख दिए हैं। उस राक्षसीके विकराल मुखका स्मरण होते ही मेरा शरीर सिहर उठता है ॥६॥

समुखत धमर यि आछे अधकूप
तात येम निपिछसे भरि
पिरविम पिसवची हम लागे प्रभु
अमावर मत्रपात परि ॥७॥

पविमो भ्रमत परि पिमों हलाहल
हियाचमि परि पाय कसा,
मिरस सहिम प्रभु, बिया माय मोक
ससारत आछे यत ब्यासा ॥८॥

पुगिछों पुगिम मार बण्ध हृदयत
शत शत मुशिचक बशम,
मकरों बेजार प्रभु तोमार कायत
आमन्यत चाकिम मगम ॥९॥

मुखर हौंहिहि मधि सिमो मार पाय
छिन्म हुय आत्मामता जुपि
सान्त्वना बिमोंसा मोर आछे लगरीया
बिपावर चकुमो एदुपि ॥१०॥

माना-सुख शान्ति प्रेम बासमा-तृपिति
तपसी थे मरीचिका भ्रम
बहुरूपी हइ मोक भुवा हि मायोम
ओपमाय पितत बिभ्रम ॥११॥

सिकारनो सुख बाँछा मकरों, मामागे
मिमिबारों पीहरर पास
बमियाइ बिलों यत बसु मरमर
मोर पस औधारेइ मास ॥१२॥

अभावका यमणाएँ भोगकर चिरदिन मैं चिरदुखी बनकर रहूँगा। परन्तु सम्मुखमें भ्रमका जो अन्धकूप है उसमें मेरे पैर न फिसलने पाएँ ॥७॥

यद्यपि भ्रममें हलाहल पीते हुए मेरा हृदय भी काला हो जाए, फिर भी मैं उसे चुपचाप सहूँगा। संसारमें और भी जितनी ज्वालाएँ हैं मुझे दे दो ॥८॥

इस दग्ध हृदयमें शत शत वृश्चिक दंशन भोग रहा हूँ और भोगता रहूँगा। फिर भी दुख नहीं करूँगा। तुम्हारे पास रहकर सदा आनन्दमें मग्न रहूँगा ॥९॥

मेरे मुँहकी हँसी यदि न रहे और आशाकी लता अगर टूट भी जाए—तब भी मुझ सान्त्वना देनवाले विषादके आँसू मेरे साथी रहेंगे ॥१०॥

आशा-सुख शान्ति-प्रेम वासना-तृप्ति ये सभी मृगतृष्णाएँ हैं। बहुरूपी बनकर ये मुझे सिर्फ धोखा देती हैं और अन्तरमें भ्रम उत्पन्न करती हैं ॥११॥

इसलिए, मैं सुख नहीं चाहता प्रकाश मुझ नहीं चाहिए और उसकी याचना भी नहीं करूँगा। सभी प्यारी वस्तुओंको मैंने फेंक दिया है—मेरे लिए तो अन्धकार ही अच्छा है ॥१२॥

समुखत धमर यि आछे मथकूप
तास येन निपिछसे मरि,
चिरदिन चिस्वधी हम लागे प्रभु
ममावर यमणात परि ॥७॥

यदिओ भ्रमत परि पिओँ हलाहल
हियाखनि परि याय फला
मिरसे सहिम प्रभु, हिया मार मोक
ससारत माछ यत ज्वाला ॥८॥

मुणिछोँ मुगिम मार दग्ध हृदयत
यत घात मुदिचक बजाम,
मकरोँ मेजार प्रभु तोमार कायत
आमन्दत पाकिम मगम ॥९॥

मुखर हाँहिटि यदि सिमो मार याय
छिन्न हय माशामता मुपि
सान्त्वना दिमोँता मोर आछे लगरीया
दिपावर पहुतो एटपि ॥१०॥

माशा-मुख शान्ति प्रेम वासना-तृपिति
सकली ये मरीचिका भ्रम
महरूपी हइ मोक मुगा दि मायोन
मोपजाय चितत विभ्रम ॥११॥

सिकारसे मुख बीटा मकरोँ, मासाने
निविकारी पीहरर फाम
बसियाइ दिसोँ यत वस्तु मरमर
मोर पसे मोधारेइ भाम ॥१२॥

अभावकी यन्त्रणाएँ भोगकर चिरदिन मैं चिरदुखी बनकर रहूँगा। परन्तु सम्मुखमें धनका जो अन्धकूप है उसमें मेरे पैर न फिसलने पाएँ ॥७॥

यद्यपि प्रममें हलाहल पीते हुए मेरा हृदय भी काला हो जाए, फिर भी मैं उसे चुपचाप सहूँगा। ससारमें और भी जितनी ज्वालाएँ हैं मुझे वे दो ॥८॥

इस दग्ध हृदयमें घात घात मृदिचक दंशन भोग रहा हूँ और भोगता रहूँगा। फिर भी दुख नहीं करूँगा। तुम्हारे पास रहकर सदा आनन्दमें मग्न रहूँगा ॥९॥

मेरे मुँहकी हँसी यदि न रहे और आशाकी लता अगर टूट भी जाए—तब भी मुझ सान्त्वना देनवाले विषादके आँसू मेरे साथी रहेंगे ॥१०॥

माया-सुख शान्ति प्रम वासना-तृप्ति ये सभी मृगतृष्णाएँ हैं। बहुरूपी बनकर ये मुझ सिर्फ धोखा देती हैं और अन्तरमें भ्रम उत्पन्न करती हैं ॥११॥

इसलिए मैं सुख नहीं चाहता प्रकाश मुझ नहीं चाहिए और उनकी याचना भी नहीं करूँगा। सभी प्यारी वस्तुओंको मन फेंक दिया है—मेरे लिए तो अन्धकार ही अच्छा है ॥१२॥

यत दिया दुख दैन्य कौशल सपाह
मानो एको बजार मनत
तोमारे विभूति जानि सकलो सहिम
यत दिम याकों ससारत ॥१३॥

सुख दुख, हाँहि अश्रु, हुप वा विषाद
तोमातेइ उद्भव विलय,
अनुकूल, प्रतिकूल घुमिये जीवर
सकलोते देखों घुमिमय ॥१४॥

दयामय, मागों एटि करपत भिक्षा
दिया मोक प्राणत आश्वास,
शिखर रेखार दरे तोमाते सदाय
याके येन अटल विश्वास ॥१५॥

चाहे कितने ही दुःख-दैन्य मेरे कन्धोंपर क्यों न लाद दो मनमें दुःख नहीं करूँगा। इन सबको तुम्हारी विभूति समझकर उन सबको सहता जाऊँगा ॥१३॥

सुख-दुःख हास्य-अश्रु हर्ष या विषाद—सभी कुछ तुमसे ही उद्भव होते और तुममें ही लय भी होते हैं। जीवका अनुकूल प्रतिकूल सब कुछ तुम्हीं हो—मैं सभीमें तुम्हारा ही दर्शन करता हूँ ॥१४॥

हे दयामय! तुमसे मैं एक भिक्षा माँगता हूँ—मुझे आश्वासन दो—पत्थरकी लकीरकी तरह तुम्हारे प्रति मेरा अटल विश्वास चिरकाल तक बना रहे ॥१५॥

यत दिया दुख दग्ध कोधित धपाइ
मानो एको बेजार मनत,
तोमारे बिभूति जानि सकलो सहिम
यत दिन थाकों ससारत ॥१३॥

सुख दुख, हाँहि मधु, हर्ष वा बिषाद
तोमातेइ उद्भव बिलय,
अनुकूल, प्रतिकूल दुयियो जीवर
सकलोते देखों सुमिमय ॥१४॥

दयामय, मागों एटि चरणत भिक्षा
दिया मोक प्राणत आश्वास,
शिमर रेखार परे तोमाखे सदाय
थाके येन अटल बिश्वास ॥१५॥

चाहे कितने ही दुःख-दैन्य मेरे कन्धोंपर क्यों न लाद दो मनमें दुःख नहीं करूँगा। इन सबको तुम्हारी विभूति समझकर उन सबको सहता जाऊँगा ॥१३॥

सुख-दुःख, हास्य-अश्रु, हर्ष या विषाद—सभी कुछ तुमसे ही उद्भव होते और तुममें ही लय भी होते हैं। जीवका अनुकूल-प्रतिकूल सब कुछ तुम्हीं हो—मैं सभीमें तुम्हारा ही दर्शन करता हूँ ॥१४॥

हे दयामय! तुमसे मैं एक भिक्षा माँगता हूँ—मुझे आश्वासन दो—पत्थरकी लकीरकी तरह तुम्हारे प्रति मेरा अटल विश्वास चिरकाल तक बना रहे ॥१५॥

---

२. बहागीर बिया

प्रकृति बीयारी गामब छोवासी
बहागी आइरे बिया,
उमह मासहे सकलोरे येन
आनन्दे न धरे हिया ॥१॥

स्वरग मरत सकलो ठाइते
उठिछे आनन्द रोल,
साजन काचन र रूपहत
गीठेइ फागत मोल ॥२॥

मधुमत्त सुरस प्रेमिक भ्रमरे
बिले सकलोते मन
मद मतिकार प्रति गिरे झिरे
मरूरि उठिले प्राण ॥३॥

शिमलु मलाधा अशोक मन्दार
श्यामल बिटपी राजि
बीज आभरण ससाह माझिछे
राइसी सामेरे साजि ॥४॥

कामिनी कौवन चम्पा नागेश्वर
सुगधि कुसुम माला
न न रूप धरि पुष्प कानगत
पातिछे प्रेमर खेला ॥५॥

मलय समीर मध बणिकर
गात तत् माईबिया
कुलर मुप्राण योबोयात मइ
हइटहि बिसनोया ॥६॥

२ बहागीका ब्याह

प्रकृति पुत्री युवती बालिका बहागी बिटियाका ब्याह है। सभीका मन आनन्द उन्मादमें परिपूर्ण हो उठा है ॥१॥

स्वर्ग-मर्त्य सभी जगहोंमें आनन्द-ध्वनियाँ हो रही हैं। राग-रूपोंके समावेश करनेमें सारा विश्व विभोर है ॥२॥

प्रेमी भ्रमरने अव्यक्त स्वरमें सभीको सूचना दे दी है। वृक्ष-लताओंके नस-नसमें भी प्राण स्पन्दित हो उठा है ॥३॥

शमल पलाश अशोक मन्दार, श्यामल विटपी राजि आदि सभीने जीर्ण आभरण बदलकर नवीन रूपके शृंगारमें पदार्पण किया है ॥४॥

कामिनी, कांचन चम्पा नागेश्वर, आदि सुगन्धयुक्त पुष्प भी नए-नए रूप धरकर पुष्प काननमें प्रमत्त झूम झूम रहे हैं ॥५॥

मधुके व्यापारी मलय समीरको जैसे अब होश नहीं रह गया है। वह पुष्पोंका सुवास पीठ पर लादकर वितरित कर रहा है ॥६॥

२ वहागीर बिया

प्रकृति कोयारो गामव छोयासो
    वहागी माइरे बिया,
जमह मासहे सकसोरे मेन
    मानन्दे न धरे हिया ॥१॥

स्वरप मरत सकसो उाइते
    उठिछे मामन्द रोल,
सामन काघन ए रपछूत
    गीटेइ जगत मोल ॥२॥

अव्यक्त सुरत प्रेमिक भ्रमरे
    बिमे सकलोते मन
गछ मतिकार प्रति सिरे सिरे
    मजरि उठिले प्राण ॥३॥

शिमसु बलाश अशोक मन्दार
    श्यामल बिटपी राजि
कोण मामरण सजाइ माहिछे
    राइसी साजेरे साजि ॥४॥

कामिनी कोषम चम्पा नागेश्वर
    सुगंधि कुसुम माला,
म म रुप धरि पुष्प काननत
    पातिछे प्रेमर पेला ॥५॥

मलय समोर गध बणिकर
    गात तल् माइकिया,
फुलर सुघ्राण थोकोआत लइ
    हदछहि बिसमोया ॥६॥

९ बहागीका ब्याह

प्रकृति पुत्री, युवती मासिका बहागी बिटियाका ब्याह है।
सभीका मन आनन्द-उन्मादसे परिपूर्ण हो उठा है।।१।।

स्वर्ग-मर्त्य सभी जगहोंमें आनन्द ध्वनियाँ हो रही हैं।
राग-रूपोंसे सजधज करनमें सारा विश्व विभोर है।।२।।

प्रेमी भ्रमरने अव्यक्त स्वरसे सभीको सूचना दे दी है।।
वृक्ष लताओंके नस-नसमें भी प्राण स्पन्दित हो उठा है।।३।।

सेमल पलास असोक मन्दार, श्यामल विटपी राजि आदि सभीने जीर्ण आभरण बदलकर नवीन रंगोंके शृंगारमें पदार्पण किया है।।४।।

कामिनी कांचन चम्पा नागेश्वर आदि सुगन्धयुक्त पुष्प भी नए-नए रूप धरकर पुष्प-काननमें प्रेमका खेल खेल रहे हैं।।५।।

गंधके व्यापारी मलय समीरको जैसे अब होश नहीं रह गया है। वह पुष्पोंका सुवास पीठ पर लादकर वितरित कर रहा है।।६।।

घुमोया घुमोया सतारे मखित
    कुसुमित तरुराजि
रमक जमक करि ठाये ठाये
    थिछे बेड़ घर साजि ॥७॥
हीरक मखित चन्द्रातप बानि
    ओलमिछे आकाशत,
आरु बसुमती थिछे पाटी परि
    सेउजीया आसमत ॥८॥
आपती सकले रभार तलते
    करिछे यार यि काम,
कोनोजनी आहि थिछे पुष्पांजलि
    कोनोबे गाइछे नाम ॥९॥
जये जये आहि फेंहु चराइटी
    मगल उरमि दिसे,
बहुिकतराइ प्रभाती सुरत
    स्तुति गीत आरम्भिसे ॥१०॥
माघ मासमत रङियाल कुलि
    सगाले एपार मात
गोसर स्पर्शित स्वरगत येन
    बाहुस प्रेमर हाट ॥११॥
मंजरि उठिस पुष्प उपबन
    बसिस भ्रमर बा,
हाँहिटि मारिस माधेमालती
    गाते सगाइ गा ॥१२॥
पाटर बसें गात मरियाइ
    पाटमार्थ पुथि माजि
जोरोण पिघाय आहिस मुम्बरी
    पाटगामस्ठी साजि ॥१३॥

सुन्दर सुन्दर सता मण्डित कुसुमित तरु-राजियोंने मिल मिल कर जगह-जगहपर तोरण बना दिए हैं ॥७॥

हीरक मण्डित चन्द्रताप (चँदोवा) आकाशमें तना हुआ है। और धरती माताने हरा आसन बिछा दिया है ॥८॥

शामियानके नीचे महिलाएँ अपने अपने कामोंमें लगी हुई हैं। कोई आकर पुष्पाञ्जलि दे रही हैं तो कोई गीत गा रही हैं ॥९॥

शुरु-शुरुमें आकर फ्छु" पक्षीने मगल ध्वनिका उच्चारण किया। इहिकतराने (पक्षीका नाम है) प्रभाती रागिनीमें प्रार्थना सगीतका प्रारम्भ किया ह ॥१०॥

आमके बगीचेमें रसिक कोकिलने भी अपना स्वर अलापा। उसके गीतकी ध्वनिसे मानो स्वर्गमें भी प्रेमका हाट लग गया है ॥११॥

प्रेमका पवन चलने लगा, पुष्प उपवन प्रफुल्ल हो उठा। मधु-मालती गलबाँही डालकर हँसने लगी ॥१२॥

पाटके चेमें (महिलाओंका एक प्रकारका चादर जसा पहनावा) पहनकर पाटमादै (पक्षी) सजधजकर जोरोण" (विवाहके पहलेका एक सस्कार—जिसमें कन्याको वरकी तरफसे कपड़े और अलकार पहनाए जाते हैं और शादीकी बात पक्की हो जाती है।) पहनानेके लिए सुन्दर युवती जैसी सजकर आइ ॥१३॥

सोण बरणीया बरीया फाँथन
    सोणारु, कमरु चम्पा
रंजिसे धुनोया बेमीर आकारे
    कम्‌पार साहुतो बोया ॥१४॥
सिग्‌गुर रंजिम असका सिसक
    पिथासेहि उन्थाराफो,
निमज पासत कुसुम फुलर
    बिसेहि रहन सामि ॥१५॥
पिथासे काणत बासिम फुलर
    थाथर पतोया फेव,
हात गुथनित फुज सतिफार
    सोमबसा मुठियारु ॥१६॥
पिथासे मयुरे गोमथें मेथेंसा
    भमफा फुलोया थाप,
बिसे मुहा मुनि फुल बडा हि रिहहा
    रथसी पखिमा थाह ॥१७॥

थाप ससस्तिफ मारुथी फुसर
    माफमर फोस्तुमणि,
राजसी धबसी अपराजितर
    नथासर करथनि ॥१८॥
साजि काथि येन आठ पारराम्‌री
    गोमापो बाय्यात बहि,
बिजा अपरूप रुप लावण्यत
    येसासे अगत मुहि ॥१९॥
धरिछे मोगान फसररामी सये
    फुसरणु गुहि पात,
कोनोजनी आहि साउनर मुरि
    छटियाइ फाकु पात ॥२०॥

सुनहली दाढ़ीवाले कांचन अमलतास और कनक-चम्पाने वेणीके आकारसे कन्याके जूड़ेको सुन्दर ढंगसे गूँथकर सजाया है ॥१४॥

उषा रानीने अलका तिलक रक्तिम सिन्दूरसे लगाया और उनके कोमल गालपर कुसुम फूलने नया रंग चढ़ा दिया ॥१५॥

कानोंमें अमारके फूलोंके कड़ाळ (एक प्रकारका सोनेका) अलंकार पहना दिए हैं और दोनों हाथोंमें कुन्द लतिकाओंके सोने जड़ी मुठिखारु (बाजूकी तरह हाथके अलंकार) पहना दीं ॥१६॥

मोर पक्षीने बड़े बड़े फूलोंके गोमचे लहँगा (एक विशिष्ट प्रकारका लहँगा। असमिया लड़कियोंके प्यारकी चीज) पहनाया और रसीली तितली बहनने बसबूटेदार चादरके "रिहा" (चादरकी तरह कम चौड़ाईवाला एक कपड़ा—चादरके साथ असमिया महिलाएँ इसे पहनती हैं) सजा दिया है ॥१७॥

भाजी फूलोंकी और आकके फूलोंकी चार मलान्तिक 'कोतमणि (बीज) बनाई गई श्यामल और श्वेत रंगके अपराजित फूलोंकी कमरकी 'करधनी' बनाई गई ॥१८॥

(बहागी) सजधजकर गुलाबी पलंगपर, राजमहिषी (की तरह) बैठी हुई है (मानो) अपने अपूर्व रूप लावण्यसे (उसने) समग्र विश्वको मोह लिया है ॥१९॥

फूल रानियाँ पुष्प-पराग और कोमल पल्लव दे रही हैं—तो वहीं कोई आकर पीसा हुआ 'लछम" का गुलाल शरीरपर उड़ा रही है ॥२०॥

कन्दर्प कुमार प्रेमिक बसन्त
    आहिछे हराटि साजि,
विविध सुरत पवित्र प्रेमर
    उठिछे बाजमा बाजि ॥२१॥
मारिसँहि मेघे कोमल चापर
    सिसीमे बजाय बाजि,
हुलो घुसघुसो लाग्ये छये छये
    हेरुनुका मोबापासि ॥२२॥
नव पल्लवित तरु शाखाबोरे
    हसतत चौंवर धरि,
कोलेपरे बाह्को विया गावसे
    आनिछे बरन करि ॥२३॥
आजि पूर्णिमार रातिटो विफोम
    आकाश कोनेरे भरा,
रजत धवल स्निग्ध किरणत
    हौंहि उठे बसुधरा ॥२४॥
दीपक सुरत जुरिसे सगीत
    सिहुया बाजमाजमी,
झिलिकि उठिस शाम्य काननर
    निकुञ्ज मडप बनि ॥२५॥
मटाक बनत सि प्रेम गीतत
    फुलिस कोलेपरे फुल,
भेंटफुल कलि फल कुँवरीरे
    हृदय मुकलि हल ॥२६॥
जड़ जगतत जीव जगतत
    पाओं समसोते बेगा
महा विश्व जुरि बिरिडिछे येन
    आनन्दर पूण रेगा ॥२७॥

———

प्रेमी कन्दर्प कुमार वसंत आज 'वर' रूपमें सजकर द्वारपर आया है—इसलिए विविध स्वरोंमें पवित्र प्रेमके वाद्य बजने लगे ।।२१।।

दादस आकर ढोल बजाने लगे। झींगुरोंने शहनाई बजाई। टुनी बुलबुल आदि पक्षियोंने विविध भंगिमाओंसे नृत्य आरम्भ किया और "हेटुलुका' (पक्षी विशेष) 'ओभा पालि' नृत्य कर रही है ।।२२।।

नव पल्लवित तरु-शाखाएँ हाथमें चँवर लिये हुए केवकी वहनको गीत गानेके लिए बुलाकर लाई हैं ।।२३।।

आज पूर्णिमाकी रात है ज्योत्स्नासे प्लावित आकाश सुन्दर हो उठा है। रजत-धवल स्निग्ध-किरणोंमें वसुन्धरा हँस रही है ।।२४।।

बावली 'सिहुवा' (पक्षी विशेष) ने दीपक स्वरसे संगीत प्रारम्भ किया। कमनीय कानोंके निकुञ्ज रूपी मण्डप इससे अनुगुञ्जित हो उठे ।।२५।।

उसी प्रेम गीत ही के कारण कण्टक वनमें कलकी खिल उठी है और जलकुमारी कुमुदिनीने भी हृदय-द्वार उन्मुक्त कर दिया है ।।२६।।

मैं देख रहा हूँ—स्थावर-जंगम समग्र महाविश्वमें मानों आनन्दकी पूर्ण रेखा प्रदीप्यमान हो रही है ।।२७।।

२ गोवा हे एबार मोर प्रिय विहंगिनि

गोवा हे एबार मोर प्रिय विहंगिनि
शुनिले अमिया भात,
हृदय परिब शान्त,
ललित मधुर स्वरे कोमल तोषिणी,
गोवा हे एबार मोर प्रिय विहंगिनि ॥१॥

यि सुरत मुग्ध हय वनर हरिणी,
गोतर लहरी तुमि,
गोवा मम प्राण चुमि,
पुराक पराण मोर मत्त मात शुनि,
गोवा हे एबार मोर प्रिय विहंगिनि ॥२॥

प्रकृतिर लीलाभूमि सौन्दर्यर खनि,
गहीन नितान्त वने,
उत्साह आनन्द मने,
हासे हासे चरि फुरा वन विहारिणी,
गोवा हे एबार मोर प्रिय विहंगिनि ॥३॥

कण्ठत मिलाइ लइ छभिन रागिणी
प्रेमिका विहगी तुमि,
भुलाला कानन भूमि
गिरि गुहा उपवन, सिन्धु तरंगिणी,
गोवा हे एबार मोर प्रिय विहंगिनि ॥४॥

परे ने मनत पची यमुना तटिनी,
कदम गछत परि,
पचमत सुर धरि
करिछिला व्रजांगना प्रेम उन्मादिनी,
गोवा सेइ सुरे मोर प्रिय विहंगिनि ॥५॥

३ गाओ एकबार मेरी प्रिय विहंगिनी !

मेरी प्रिय विहगिनी एकबार गाओ। तुम्हारी अमृतमयी वाणी सुनकर मेरा हृदय शान्तिसे परिपूर्ण हो उठता है। ललित मधुर स्वरसे हे जीवन-तोषिणी गाओ—मेरी प्रिय विहगिनी—एक बार गाओ ॥१॥

जिस स्वरसे वनके हरिण मुग्ध हो उठते हैं वैसही गीतकी लहरें उठाकर उन्मुक्त स्वरसे गाओ। तुम्हारा गीत सुनकर मेरे प्राणोंको शान्ति मिले। गाओ मेरी प्रिय विहगिनी—एकबार गाओ ॥२॥

हे वन विहगिनी सौन्दर्यकी खान प्रकृतिकी लीलाभूमिके गंभीर निर्जन वनमें आनन्दोल्लाससे वृक्षोंकी डालियोंपर तुम घूमती फिरती हो। गाओ मेरी प्रिय विहगिनी—एक बार गाओ ॥३॥

कण्ठमें छत्तीस रागिनियोंका समन्वयकर प्यारी विहगिनी—तुमने कानन, भूमि, गिरि-गुफा उपवन सिंधु तरंगिनी—आदि सबको मोहित कर डाला है अत गाओ—मेरी प्रिय विहगिनी—एक बार गाओ ॥४॥

हे विहगिनी—क्या तुम्हें स्मरण है कि यमुना तटपर कदम्ब वृक्षपर बैठकर अपने पंचम स्वरमें तुमने ब्रजांगनाओंका प्रेमोन्मादिनी बना डाला है। गाओ—मेरी प्रिय विहगिनी—उसी स्वरसे एक बार गाओ ॥५॥

हृदयर स्तरे स्तरे गाजाय काहिना,
अगाढ अतीत स्मृति,
सोमार सुबसा गीति,
मानस सुवत हृहि माजा कुमुदिनी,
गोवा हे एबार मोर प्रिय विहंगिनि ॥६॥

मर्त्यवासी मानवक विवस सुराणि,
तोमा हेन प्रियनिधि
पठियाइ दिले विधि,
स्वर्गीय सुतर बेगे कठे सुधा सानि,
गोवा हे एबार मोर प्रिय विहंगिनि ॥७॥

एबार सुराइ गोवा मानस मोहिनी,
सरला विहगी सुनि,
गीत सुनि यावों धनि
प्रवाचपतीया हइ थाकों किवा गणि,
गोवा हे कोमल सुर प्रिय विहगिनि ॥८॥

परर्झरित करे तनु ससार योरणि,
वीणार मधुर ताने,
नापाओं सान्त्वना प्राणे,
मस्फुट सगीते दिया मृत सञ्जीवनी,
मामारिवा अमागाक प्रिय विहगिनि ॥९॥

शान्तिर मराल देहि। सुख दिया यनि,
माजामा मागर प्राणे,
माजामा सुजये वेगे,
फुल मधु सुहि फुरा फुसनि फुलनि
गोवा हे एबार मोर प्रिय विहगिनि ॥१०॥

हृदयके प्रति स्तरमें वीणाकी कथाएँ समाई हुई हैं। तुम्हारे मधुर गीतने अतीत स्मृतिको जगाकर मानस-सरोवरमें आशा-कुमुदिनीको विकसित कर दिया है। गाओ-मेरी प्रिय विहगिनी एक बार गाओ ॥६॥

मर्त्यवासी मानवको शान्ति प्रदान करनेके लिए विधाताने तुम्हारे कण्ठमें अमृत भरकर स्वर्गीय दूतके वशसे तुम्हें अपनी—प्रियनिधि बना भेजा है। गाओ—मेरी प्रिय विहगिनी-एकवार गाओ ॥७॥

हे मानस मोहिनी-तुम सरस विहग हो तुम्हारे गीत सुनकर में मग्न हो जाता हूँ और तल्लीन होकर कुछ गुनगुनाता रहता हूँ—गाओ—हे प्रिय विहगिनी—एकवार कोमल स्वरसे गाओ ॥८॥

संसारकी ज्वालासे शरीर जर्जरित हो रहा है। वीणाकी मधुर रागिणीसे मुझे सान्त्वना नहीं मिल पाती। तुम्हारे अस्फुट संगीतसे मृत सञ्जीवनी फूँक दो। गाओ-हे प्रिय विहगिनी-मुझे हताश न करो ॥९॥

तुम शान्तिका भण्डार हो-न तुम्हारा छोटासा हृदय थकावट ही जानता है—और न उस दुःखकी अनुभूति ही होती है चूँकि तुम फलोंका मधु पीते हुए बाग-बगीचोंमें घूमती फिरती हो। अतः गाओ-हे प्रिय विहगिनी-एकवार गाओ ॥१०॥

कोलाघोन प्रियतमा काक मो बखानि
　　फुथे फुंथे धुरि धुरि,
　　गोथा फस ठेमो धरि,
प्रेमिक मिलन गीत मधुर भाखिणो,
गोथा हे एवार मोर प्रिय बिहगिनि　　॥११॥

फल पाम सेइ शबित शान बिकाशिनो
　　छ्रिया प्रम रसे मरा
　　बने बने गाइ फुरा,
बिभूर महिमा मक्ष तुमि बिरहिणी,
गोथा हे एवार मोर प्रिय बिहगिनि　　॥१२॥

बिहगी मोहोथा तुमि कार प्रेमाधीनि
　　कोने मो करिले कोथा,
　　अमृत भार बोथा,
कोन सेइ जन प्रेम करुणार खनि,
देखुवाइ दिया मोक प्रिय बिहगिनि　　॥१३॥

तुमा हे एवार पखी अमरगार बाणी
　　भासागे पार्थिव सुख,
　　मचरी मनत दुख,
सोंसार लगते उरि याओ बिहगिनि,
सवाय यइछे यत प्रेम मन्दाकिनी　　॥१४॥

———

प्रियतमे, बताओ कुञ्ज-कुञ्जमें कितनेही रूपोंमें किस प्रेमीकी प्रशसामें मिलन गीत गाती हो–हे मधुर भाषणी–गाओ–मेरी प्रिय विहगिनी–फिरसे एक बार गाओ ॥११॥

वह ज्ञान विकासिनी शक्ति मुझे कहाँसे मिलेगी ? तुम्हारा हृदय प्रम रससे परिपूर्ण है। हे विरहिणी तुम विभुकी महिमा बनबनमें घूम घूमकर गा रही हो–गाओ एक बार मेरी प्रिय विहगिनी गाओ ॥१२॥

तुम विहगिनी नही हो बताओ किसकी प्रमाधीना हो किसन तुम्हें अमृतका भार ढोनवाली बनाया है। प्रेम और करुणाकी खान वह कौन है ? गाओ–हे प्रिय विहगिनी—मुझे उन्हें दिखा दो ॥१३॥

हे पक्षी–एकबार इस अभागेकी भी बात सुन लो–मुझे पार्थिव सुख नही चाहिए (उनके अभावसे) मनमें भी मै दुख का अनुभव नही करूगा। जहाँ सदा प्रमकी मन्दाकिनी प्रवाहित हो रही हो–वहाँतक मैं तुम्हारे साथ उड़ चलूँगा।

———

४ केतेकी चराइ

अ केतेकी, अ केतेकी किय एनेबारे
घुघूये घुघूये उरि उरि
किय फुरा घुरि घुरि,
कार भो विरह गोवा अबुज भापारे ॥१॥

गगन विहारी पखी कोन तुमि कोया,
लोकालय परि तुमि
फुरा डाले डाले भ्रमि,
आवेग सुरत किओ प्रेम गीत गोवा ॥२॥

स्वाधीन भावरे पूर्ण हृदय तोमार
गहीन आरण्य बन,
किम्बा पुष्प उपवन,
करा गइ तुमि तात आनन्दे विहार ॥३॥

"केतकी" साहुरी नाम कि गुणत लभा
कार प्रेमे मत्त हइ
घोर अरण्यत गइ,
गछ लता गिरि नदी सबाके भुलाला ॥४॥

प्रेमगीत गायनइ कत नो दिविसा,
एकोटि भावर गान,
एकोटि प्राणर ताने,
कटुया ससार तुमि कोमल करिला ॥५॥

निजम दुपर निशा गहीन बनत
अमिया गीतर धार
दुमिटिमी कत धार
धीरे धीरे मिलि योवा घोर बताहत ॥६॥

॥ केतेकी पक्षी

अरी केतकी अरी ओ कतेकी इस तरह भूयमें क्यों घूमती फिरती हो और अपनी अनजान बोलीमें किसकी विरह वेदना गा रही हो ? ॥१॥

हे गगन विहारी पक्षी तुम कौन हो बताओ लोकालय त्यागकर वृक्षोंकी टहनियों और डालियोंपर घूमती फिरती आवेग भर स्वरसे किसका प्रेम-संगीत गा रही हो ? ॥२॥

स्वाधीन भावोंसे ही तुम्हारा हृदय परिपूर्ण है। गहन निर्जन वनों अथवा पुष्पोद्यानोंमें आकर तुम आनन्दसे विहार करती हो ॥३॥

कतेकी ऐसा सुन्दर नाम तुमने किस गुणसे लिया ? तुमने किसके प्रेममें उन्मत्त होकर घोर अरण्यमें वृक्ष लता गिरि, नदी आदि सभीको मोहित कर लिया ? ॥४॥

प्रेमगीत गाना तुमने कहाँसे सीखा ? एक ही भावनासे परिपूर्ण गान और एक ही जीवन-सामने कठोर संसारको भी तुमने कोमल बना दिया है ॥५॥

निस्तब्ध दोपहर निशीथकालमें सघन वनमें धीरे-धीरे पवनके साथ विलीन होते हुए तुम्हारे सुन्दर गीतोंको मने कितनी ही बार सुना है ॥६॥

४ केतकी चराग

ओ केतेकी, ओ केतेकी किस एलेरे
    घुमूये घुमूये उरि उरि
    किस फुरा घुरि घुरि,
कार मो विरह गोथा मधुर भाषारे ॥१॥

गगन विहारी पक्षी कोन तुमि कोथा,
    लोकालय एरि तुमि
    फुरा डाले डाले भ्रमि,
आवेग पुरत किनो प्रेम गीत गोथा ॥२॥

स्वाधीन भावेरे पूर्ण हृदय तोमार
    गहीन आरण्य वन,
    किम्बा पुष्प उपवन,
करा गइ तुमि तात आनन्दे विहार ॥३॥

"केतकी" नाहरी नाम कि गुणत सखा
    कार प्रेमे मत्त हइ
    घोर अरण्यत गइ,
गछ लता गिरि नदी सबाके सुनाला ॥४॥

प्रेमगीत गाबलइ कत जे शिकिला,
    एकटि भावर गाने
    एकेटि प्राणर ताने,
कठुवा संसार तुमि कोमल करिला ॥५॥

निजम दुपर सिगा गहीन बनत
    अमिया पीतर धार
    घुमिछिली कत धार,
धीरे धीरे मिसि मोवा धीर बताहत ॥६॥

४. केतेकी पक्षी

अरी केतेकी अरी ओ केतेकी इस तरह शून्यमें क्यों घूमती फिरती हो और अपनी अनजान बोलीमें किसकी विरह वेदना गा रही हो ? ॥१॥

हे गगन विहारी पक्षी तुम कौन हो बताओ लोकालय त्यागकर वृक्षोंकी टहनियों और डालियोंपर घूमती फिरती आवेग भरे स्वरसे किसका प्रेम-संगीत गा रही हो ? ॥२॥

स्वाधीन भावोंसे ही तुम्हारा हृदय परिपूर्ण है। गहन निर्जन वनों अथवा पुष्पोद्यानोंमें आकर तुम आनन्दसे विहार करती हो ॥३॥

"केतेकी" ऐसा सुन्दर नाम तुमने किस गुणसे लिया ? तुमने किसके प्रेममें उन्मत्त होकर घोर अरण्यमें वृक्ष, लता गिरि नदी आदि सभीको मोहित कर लिया ? ॥४॥

प्रेमगीत गाना तुमने कहाँसे सीखा ? एक ही भावना परिपूर्ण गाम और एक ही जीवन-तानस कठोर [illegible] तुमने कोमल बना दिया है ॥५॥

निस्तब्ध दोपहर निशीथकालमें [illegible]
पवनके साथ विलीन होने [illegible]
कितनी ही बार सुना है ॥ ॥

मरतत यह योवा सगोतर धारा
एकेपरे शुनि शुनि
पाकों किया माथि गणि,
मापोनाक मापुमिये हुओं आत्महारा ॥७॥

तोमार सगोते प्रिय जामे कि मोहिनी,
माधार पत्नुम पाहि
मारे मिचिकिया हाँहि,
हृदय बीणात बाजे प्रेमर रागिणी ॥८॥

प्रेमिक मिलन आशा बुके बान्धि लइ,
आनन्द सोतत पाहि
बनाइ मुकुम पाँही
मिलन बातरि दिया प्रेमिकक गइ ॥९॥

तुमि बिने सखो कोई संसारत नाइ,
परर दुखत दुखी
परर सुखत सुखी
एकटि उद्देश्य लइ फुरिछा सदाय ॥१०॥

बनर बिहग तुमि भ्रमर भिखारी
मानुहर रीतिनीति
बुजिमोया स्नेह प्रीति
सकलीये ममोया कि हला बनचारी ॥११॥

किहतु मोबोया पखी मानुहर मुख
पार्थिव सुखर लाग
मालागे मे भाग बाव
सचारुच माइ नेकि संसारत सुख ? ॥१२॥

मत्यभोजमें प्रवाहित संगीतका प्रवाह सुनत सुनत तल्लीन हो कुछ सोचताही रह जाता हूँ और अपने आपमें खो जाता हूँ ।।७।।

हे प्रिये तुम्हारे संगीतमें कौनसा सम्मोहन-मन्त्र है जिससे अन्तरमें स्थित आशाके कमल-दल स्मित हास्यसे खिल उठते हैं और हृदय-वीणामें प्रेमकी रागिनी बज उठती है ।।८।।

प्रियतमकी मिलन-कामना हृदयमें सँजोकर आनन्द प्रवाहमें लीन मुकुलको बजाती हुई प्रेमीका मिलनकी सूचना देती हो ।।९।।

तुम्हारे बिना संसारमें मेरा कोई नहीं है। तुम दूसरोंक सुखमें सुखी और दुखमें दुखी हो—एक ही उद्देश्य लिए तुम निरन्तर घूम रही हो ।।१०।।

वनकी विहंगिनी तुम प्रेमकी भिखारिन हो। मनुष्यकी रीति-नीति और दो दिनोंकी स्नेह प्रीति सभीका परित्याग कर तुम वनचारिणी बनी हो ।।११।।

हे पक्षी तुम मनुष्यका मुंह क्यों नहीं देखती? पार्थिव सुखोंके लड्डू क्या तुम्हें अच्छे नहीं लगते? क्या वस्तुत संसारमें सुख नहीं है? ।।१२।।

मरतत बह योवा संगीतर धारा
एकेधरे शुमि शुमि
थाकों किवा माथि गणि,
आपोनाक आपुनिये हयों आत्महारा ॥७॥

तोमार सगीतें प्रिये पामे कि मोहिनी,
आशार पखुम पाहि
मारे मिचिकिया हाँहि
हृदय बीणात बाज प्रमर रागिणी ॥८॥

प्रमिक मिसम आशा बुके बान्धि लइ,
आनन्द सोतत पाहि
बजाइ मृदुम पाँही
मिसन बातरि दिया प्रेमिकक गइ ॥९॥

तुमि बिने सठो वर्ई संसारत नाइ,
परर सुखत सुखी
परर दुखत दुखी,
एकटि उद्देश्य लइ फुरिछा सदाय ॥१०॥

अमर बिहग तुमि प्रेमर भिखारी
मानुहर रीतिनीति
बुजिनीया स्नेह प्रीति
सकलोके मओषा कि हमा ममकारी ॥११॥

विहगु मोबीया पखी मानुहर मुख
पार्थिव सुखर साद
भासागे न भाम बाद
सचारन्ये नाइ मनि ससारत मुख ? ॥१२॥

मर्त्यलोकमें प्रवाहित संगीतका प्रवाह सुनते सुनते तल्लीन हो कुछ सोचताही रह जाता हूँ और अपने आपमें खो जाता हूँ ।।७।।

हे प्रिये तुम्हारे संगीतमें कौनसा सम्मोहन-मन्त्र है जिससे अन्तरमें स्थित आशाके कमल दल स्मित हास्यसे खिल उठते हैं और हृदय-वीणामें प्रमकी रागिनी बज उठती है ।।८।।

प्रियतमकी मिलन-कामना हृदयमें सँजोकर आनन्द प्रवाहमें लीन मुकुलवंशी बजाती हुई प्रेमीको मिलनकी सूचना देती हो ।।९।।

तुम्हारे बिना संसारमें मेरा कोई नहीं है। तुम दूसरोंके सुखमें सुखी और दुखमें दुखी हो—एक ही उद्देश्य लिए तुम निरन्तर घूम रही हो ।।१०।।

वनकी विहगिनी तुम प्रमकी भिखारिन हो। मनुष्यकी रीति-नीति और दो दिनोंकी स्नेह प्रीति सभीका परित्याग कर तुम वनचारिणी बनी हो ।।११।।

हे पक्षी, तुम मनुष्यका मुँह क्यों नहीं न्यखती? पार्थिव सुखोंके साज़ क्या तुम्हें अच्छे नहीं लगते? क्या वस्तुतः संसारमें सुख नहीं है? ।।१२।।

दुनियामे प्रिय सखा क्या एहि कर्मों
एकोदे मासाग मोक,
मकरीं बेजार शोक,
जन्म जन्मान्तरे येन तोमाके हे पार्मी ॥१३॥

सुन्दर दुखनि हिया माह भेवामेव,
एके ध्याम एके शाम,
मिलि याव दुटि प्राण,
कथापितो दुजनर महत्व विच्छेद ॥१४॥

हे प्रिय सखी—एक बात कहूँ—सुनोगी क्या ? मुझे और कुछ नहीं चाहिए। (उनके लिए) मैं किसी प्रकारका शोक भी नहीं करूँगा। सिर्फ एकही अभिलाषा है कि जन्म जन्मान्तरमें तुम्हीको मैं प्राप्त करूँ ॥१३॥

सुन्दर दुखी दो-हृदय जिनमें कोई भवभाव नहीं। एक ध्यान, एक ज्ञान—दोनों एक प्राण हो जाएँगे और कभी भी दोनोंका विच्छेद नही होगा ॥१४॥

५. वशिष्ठाश्रम

हे पथिक अपना शापित जीवन यहाँ आकर शान्त करो— यहाँ क्षणभर मात्र बैठनेसे आपका अन्तर शान्त हो जाएगा। यह गिरि सन्ध्याश्रम पथिकके लिए शान्ति-निकेतन और प्रेम-पुरी है ॥१॥

यह प्रकृतिका काम्यवन ऋषिका आश्रम है। देव-वांछित यह पुरी अत्यंत सुन्दर है। चारों ओर जनागमहीन निस्तब्ध और निर्जन है। गंभीर प्रकृति योगीके समान ध्यानमें मग्न है ॥२॥

पर्वत-कन्या सुन्दर स्वभाववाली सन्ध्या सविता कान्ता— तीनों बहनें स्वर्गीय भावोंसे महिमाके गीत गाती हैं और मधुपुष्प मानो स्वामीको गोदमें सम्भाषण कर रही हैं ॥३॥

दोनों तरफ फूलोंकी पंक्तियाँ—वृक्ष लताएँ झूमझूमकर ऋषिके चरणोंमें प्रणाम करती हैं। गगनविहारी पक्षी काननको मोहित कर कुंज काननमें मंगल आरती करते हैं ॥४॥

(यहाँ किसी कालमें) पवित्र यज्ञकी गंधसे दूर-दूर तक पुण्य तपोवन पवित्र हो उठे थे। वनके विहग और हिरण प्रेममुग्ध होकर सामवेदके गीत ध्यानसे सुना करते थे ॥५॥

स्वर्गके विद्याधर, देव और देवियाँ विविध भंगिमासे देववाद्य बजाया करते थे और ऋषि-कन्याएँ मिलकर पंचमस्वरमें दीपक अलाप आराधनाके गीत गाया करती थीं ॥६॥

५. वशिष्ठाश्रम

हे पथिक, जुरोवाहि तापित जीवन,
क्षन्तेक वहिसे छाया परिव शीतल,
नागस्था पथिकर शान्ति निकेतन,
अभया प्रेमर पुरी गिरि सन्ध्याचल ॥१॥

प्रकृतिर काम्यवन ऋषिर आश्रम,
अमर वाँछित पुरी अति चित्तोपम
धारि दिश निजजीस निमात निथम,
गभीर प्रकृति योगी ध्यानत मग्न ॥२॥

सन्ध्या ललिता कान्ता पवृथत आयारी,
तिनिमोटी बाइ मनी स्वर्गीय मायत,
महिमार गीत गाय स्वभाव सुन्दरी,
समापिछे प्रमुपत्र स्वामीर कोसत ॥३॥

कुकापे फुलर शारी गछ ललिकाइ
हासिमाति सेवा करे ऋषिर पामत,
गगन बिहारी पक्षी कानन मुन्नाइ,
मगन आरति करे कुज कामनत ॥४॥

पवित्र होमर गाये बहु धूरस,
करिछिल सुपवित्र पुण्य तपोवन
भ्रमर पराइ पहु प्रमे मुग्ध हइ
प्राण, पाति सुनिछिल सामवेद गान ॥५॥

स्वरगर विद्याधरी देव किन्नांगना,
बजाय अमर बाद्य छओ धरि धरि
शोपन पचम सुरे गीत आराधना
गाइछिल मिलि मन ऋषिर जीयारी ॥६॥

५. वशिष्ठाश्रम

हे पथिक अपना तापित जीवन यहाँ आकर शान्त करो— यहाँ क्षणभर मात्र बैठनेसे आपका अन्तर शान्त हो जाएगा। यह गिरि सन्ध्याचल पथिकके लिए शान्ति-निकेतन और प्रेम पुरी है ॥१॥

यह प्रकृतिका काम्यवन ऋषिका आश्रम है। देव-वांछित यह पुरी अत्यन्त सुन्दर है। चारों ओर जनासहीन, निस्तब्ध और निर्जन है गंभीर प्रकृति योगीके समान ध्यानमें मग्न है ॥२॥

पर्वत-कन्या सुन्दर स्वभाववाली सन्ध्या, ललिता कान्ता— तीनों बहनें स्वर्गीय भावोंसे महिमाके गीत गाती हैं और ब्रह्मपुत्र मानो स्वामीकी गोदमें सम्भाषण कर रही है ॥३॥

दोनों तरफ फूलोंकी पंक्तियाँ—वृक्ष लताएँ झूमझूमकर ऋषिके चरणोंमें प्रणाम करती हैं। गगनविहारी पक्षी काननको मोहित कर कुंज काननमें मंगल आरती करते हैं ॥४॥

(यहाँ किसी कालमें) पवित्र यज्ञकी गंधसे दूर-दूर तक पुण्य तपोवन पवित्र हो उठे थे। वनके विहग और हिरण प्रेममुग्ध होकर सामवेदके गीत ध्यानसे सुना करते थे ॥५॥

स्वर्गके विद्याधर, देव और देवियाँ विविध भंगिमासे दवबाद्य बजाया करते थे और ऋषि-कन्याएँ मिलकर पंचमस्वरमें दीपक अलाप आराधनाके गीत गाया करती थीं ॥६॥

इन्द्रर अमरावती प्रमोद कानन,
भरतभूमित योवा किवा शोभा धरे
बनदेवी सवे पिन्धि पुष्प आभरण,
प्रकृति कुमनि माजे आनन्दे विहरे ॥७॥

ऋतुराज बसन्तर प्रिय सम्भाषणे,
सौन्दर्य्य ओपचि परे पुष्प काननर
फुलर सुगन्ध आनि सौम्य समीरणे,
बिलाइछे शान्ति सुधा स्वर्गीय प्रेमर ॥८॥

सुकणी कुलिये गाते अपूर्व्व तानेरे,
जिलीये बजाय वीणा मिलन सुरत,
गौरव प्रकृति मेघि ललित झंकारे,
उठे तार प्रतिध्वनि काम्य काननत ॥९॥

शरतर जोन ज्योति पुवति जीनर,
बिरिङे येतिया आहि फुलर ओपात
कि ये मनोमोहा दृश्य कुञ्ज काननर,
परागे बिमोत हय पवित्र भावत ॥१०॥

पहुस श्यामल क्षेत्र झिलमिले यथा,
तथा आछे वशिष्ठर हृदय जुरत
अतीत गौरव स्मृति आरु पुण्य कथा,
बिश्वमोहा अभिनय कीर्तिजात घात ॥११॥

कत युग मार गल वासर सोंतत,
आजिओ वशिष्ठाश्रम आछे पूर्व्व भावे,
आम्बर गौरव घोषि सत्य युगत,
बिजतार हेम्बोसनि सहिछे गौरवे ॥१२॥

———

मानो इन्द्रकी प्रमोदकानन अमरावती ही मर्त्यमें सुशोभित हो रही है । वनदेवियाँ पुष्पोंके आभरण पहनकर प्रकृतिके पुष्पोद्यानमें आनन्दसे विहार कर रही हैं ।।७।।

ऋतुराज वसन्तके प्रिय सम्भाषणसे पुष्पकाननका सौंदर्य छलक रहा है और सौम्य समीरण फूलोंकी सुगन्ध लाकर स्वर्गीय प्रमकी शान्ति सुधा बिखरा कर रहा है ।।८।।

रसीली कोकिल अपूर्व स्वरसे गाती है । झींगुर मिलन स्वरमें वीणा बजाते हैं । ललित झंकारसे नीरव प्रकृतिको भेदकर कमनीय काननमें उसकी प्रतिध्वनि गूँज उठती है ।।९।।

शारदीय चन्द्रमाकी प्रभातकालीन क्षीण ज्योति जब पुष्प गुच्छ पर पड़कर चमकती है, उस समयका कुञ्ज काननका दृश्य कितना मनोरम हो उठता है ! पवित्र भावोंसे प्राण आत्म विभोर हो उठते हैं ।।१०।।

विस्तृत श्यामल क्षेत्र शिलाओंसे गुँथी हुई है । अतीत गौरवकी स्मृति और पुण्य कथाएँ तथा शत शत विश्व-लीला अभिनय-कीर्ति गाथाएँ वशिष्ठके हृदय-दुर्गपर लिखी हुई हैं ।।११।।

कालक्रममें कितने ही युग बीत गए, लेकिन वशिष्ठाश्रम आज भी उसी तरह ही है । मध्य भुवनमें आर्योंकी गौरव घोषणा करनेवाले (उसने) विजेताओंके (काम) आक्रमण मौन रहकर सहे हैं ।।१२।।

---

३ मरण

माछिलों निभेइ सब एकोके मजमा
मातृर कोलात रगे नाचि फुरिछिलों
मायामय संसारर विचित्र भाभोना,
हहा कन्दा दुख्य किमों एको मेरेछिमों ॥१॥

तौतयाओ तुमि देव, अलक्षिते माहि
भाग्यलिपि वेखि मोर उठिछिला हाँहि
पाहरिलों अतीतर सि सब काहिनी,
नापामों सि सुख आरु इह जनमत ॥२॥

देखिलों संसार चित्र, प्राणर संगिनी
हल मोर दुखे दुखी संसार पनत
सतियाओ तुमि मोर रेखि रेहरूप,
प्रणयर परिणाम बुजिला स्वरूप ॥३॥

भरि दिलों जीवनर तृतीय चापत,
प्रिय परिजन लइ पातिलों संसार,
कत ये सहिलों दुख जीवन पथत,
मेरेछि उपाय एको करों हाहाकार
तौतयामो तुमि मोर बहु नितामत,
जीवनर दाप सीसा सेंचिला भाग्यत ॥४॥

माडिल आश्रय तरु उरि गल बासा,
सम्पदर सपरीया, आत्मीय स्वजने,
उमति माथाय मोक देखि दुरवस्था,
मरलइ चापि चापि फुरों बने बने
तेतियाओ तोमाक्हे सुमरि सुमरि,
भिचारों परम साध टिनि माया मरि ॥५॥

६ मरण



मैं बहुत छोटा था। कुछ जानता नहीं था। माँकी गोदमें उल्लाससे खेला-कूदा करता था। मायामय संसारके विचित्र नाटकके हास्य और क्रन्दनके दृश्य मैंने कुछ भी नहीं देखे ॥१॥

हे देव! तब भी तुम अलक्षित रूपमें आकर मेरी भाग्य लिपि देखकर हँस रहे थे। आज अतीतकी उन बातोंको मैं भूल गया हूँ। वह सुख इस जन्ममें अब और नहीं मिलेगा ॥२॥

संसार चित्र मैंने देखा। संसारमें मेरी प्राण-संगिनी मेरे दुखमें दुखी हुई। फिर भी तुमने मेरा रंग-ढंग देखकर प्रणयका परिणाम ठीक समझ लिया था ॥३॥

जब मैंने जीवनके तृतीय स्तरमें प्रवेश किया—प्रिय परिजनको लेकर संसारकी रचनाकी—कितने नहीं दुख मैंने सहन किये जीवन पथ पर! उस समय कोई उपाय न देखकर मेरा मन हाहाकार कर उठता था। हे देव तब भी तुमने मेरे सिरहाने बैठकर जीवनकी दीप शीखा मेरे भाग्यमें लिख दी ॥४॥

मेरा सहारा ही टूट गया—घर उजड़ गया सम्पदाके चले जानेसे मेरी दुर्दशामें आत्मीय स्वजन भी मुझे अनदेखा करने लगे। मैं अकेला ही रोता हुआ—जगलोंमें भटकता रहा। हे देव! उस समय भी मायाकी डोरी तोड़ तुम्हारा ही ध्यान कर चरम सीमाका अनुसंधान करता था ॥५॥

आहा मोर चिर सखो, आहा प्रिय, सखा,
तोमार मुखके चाइ सुख पाइरिम,
दिव्य रूप धरि तुमि दिया मोक देखा,
यिबिना चिताक मइ साचटि धरिम
सिदिनाहे दूर हब संसार यातना,
सिदिनाहे प्राणे मोर लभिब सान्त्वना ।।६।।

आओ हे मेरे चिर साथी मेरे सखा आओ—मैं तुम्हारा मुँह देखकर ही दुःख भूल जाऊँगा। जिस दिन मैं चिताग्निका आलिंगन कर लूँगा, उस दिन मुझे दिव्य रूप धर दर्शन दोगे। उसी दिन मेरी संसार-वासनाका अन्त होगा और उसी दिन मेरे प्राणोंको सान्त्वना मिलेगी ॥६॥

● दहिकतरा



म मरमी बधु मोर म एहिकतरा
कोन मुर्च्छनात तोर बाजे बोसोरा,
    मिसन माधुरी लइ
    माहिछ सावरी लइ
कोन बिरही क लिखि प्रेमर बतरा
पठुमिते आछे रइ गुमचि कतरा ॥१॥

आलोक मे अधकार सुदूर प्रान्तर
    कोन सागरर परा
    अमृत गरस भरा
मेलि बिछ सफुरादि मोहिनी कठर
बइ गल बिश्वव्यापि दिक दिगन्तर ॥२॥

कोनेनो पठासे तोक कमकण्ठी करि
    पुबे दिसे धमफाट
    माथिलि मुवली मात
शीतली मलया बाबे बिमे पात तरि
प्रकृतिर निस्तब्धता गम भेद करि ॥३॥

जह गल बर्षा गल माहिल धारत
    बिद्याधरी चित्रलता
    पजमी बिसहि बता
माथे पत्त छन्द सुनि करुण सुरत
थमए सगासि रिनो मम्बनपुरत ? ॥४॥

कापत मणलपट फुसर बरणि
    मिति यत बममाला
    पिछाइछे बममाला
युगत राजाइ दिट सुगसुगोपनि
धरिछे ऊपाइ रप मनर बरणी ॥५॥

दहिकतरा (पक्षी विशेष)

ऐ प्यारी सखी दहिकतरा किस मूर्च्छनामें तुम्हारा बुलाउ बज रहा है ! मिलन-माधुरी लेकर तो तुम आई हो पर किस विरहीको प्रेमका सन्देश दोगी ? मन्दिरद्वारपर 'गुलचि 'कतरा (फूल विशेष) तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही हैं ॥१॥

तुम कौनसे सुदूर प्रान्तका आलोक और अन्धकार ला रही हो ! अपने मोहनी कण्ठसे किस सागरके अमृत और विषको ढाल रही हो जिससे कि विश्वके दिग्दिगन्त परिव्याप्त हो रहे हैं ॥२॥

कलकण्ठी बनाकर तुम्हें किसने भेजा है ? पूर्व दिशामें पौ फटते ही तुम्हारी सुरीली तान सुनाई देती है, जो प्रकृतिकी निस्तब्धता भेदती हुई दूर चली जाती है ठीक कुछ उसी तरह जिस तरह शीतल मलय वायुसे पालतनी नाव चली जाती है ॥३॥

ग्रीष्म गया वर्षा गई और आ गई शरद् ऋतु इसमें विद्याधरी चित्रलेखा रूपी खंजन पक्षीने दर्शन दिया। यह कितने ही छन्दोंमें करुण स्वरोंसे नृत्य करती है जिससे नन्दनपुर आश्चर्य विभोर हो जाता है ॥४॥

गोदमें भगलपट और फूलोंकी डाली लिए वनबालाएं आपसमें वनमाला पहना रही हैं और मस्तकपर कुगडुगी (वस्त्रविशेष) सजा रही हैं। उषाने भी धीरे धीरे सज-धजकर स्वर्णिम वप न लिया है ॥५॥

पुष्प वृष्टि हल तोर परशमणित
        निमल धाहुनि डरा
        पानी पियसिरे भरा
मुकुतार शुभ्रमाला श्यामल पाटीत
कि सुन्दर स्निग्ध कान्ति फुल्ल बनभित ॥६॥

श्यामल तृणेरे भरा धुनीया पथार
        सुन्दरी शारदबाला
        पिंधासे हरित माला
संगीतर हिल्लोलत प्रेमर आधार
कुलित हृदत मन कुमुद मधु सार ॥७॥

आछिलि निमाती [illegible] कत दिन धरि
        बलिल शीतल बाय
        कुवघाइ बिमे राय
आहिल बसन्त बरा साहुबाह करि,
भावरि आमिनि तये तुसि सुवागरि ॥८॥

क्षीरभावी मुकण्ठर मल्लार ध्वनित
        बाजि उठ बनवेणु
        उरि फुरे फागुरेण
बरे नृत्य लीलामुंगी फुल्ल कुसमित,
उठिल स्पन्दन गिरि शिखरमणित ॥९॥

पल्लवे पल्लवे भरि उठे गीति छन्द,
        दिवा अपरूप दृश्य
        उद्वेलित महाविश्व
स्वरगर परा आनि अमृतर भांड
ढालि दिछ मरतत प्रेम मकरन्द ॥१०॥

तुम्हारे स्पर्श मात्रसे ही मानो पुष्पवृष्टि हो रही है। हरी भरी तृणाच्छादिता भूमि "पानी पिपलि" (एक प्रकारका पौधा) से भरी हुई है जो मानो श्यामल बिस्तरपर मुक्ताकी शुभ्र मालाएँ हैं। इस प्रकार उत्फुल्ल वनमें कितनी सुन्दर स्निग्धकान्ति विराजमान है! ॥६॥

श्यामल तृणोंसे सुन्दर खेत विभूषित हैं। मानो सुन्दरी शरदवालाने ही यह हरित माला पहनाई हो। प्रभाधार हृदयोंमें संगीतकी हिल्लोरोंसे न जाने कितने ही कुमुद प्रस्फुटित हो रहे हैं ॥७॥

कितने दिनों तक तुम नीरव रहीं? (लेकिन जब) शीतल वायु प्रवाहित होने लगी, कुदवा (पक्षी विशेष) बोलने लगा और वसंत बरवेशमें सजधज कर आया तब तुमने ही मंगल गीतोंसे उसका स्वागत किया ॥८॥

जिस समय मधुर ध्वनिसे मल्हार अलापती हो उस समय मानो तुम्हारे कण्ठसे क्षीरकी वर्षा होती है जिससे वन वेणु वज उठती है, फाग रेणु (गुलाल) उड़ने लगती है तथा विविध भाव भंगिमासे भ्रमर नृत्य करने लगता है—जिसमें समस्त गिरि शिखर स्पन्दित हो उठता है ॥९॥

पत्तों-पत्तों तक में गीतिछंद भर उठा है।—इस तरह प्रेम मकरन्दसे परिपूर्ण विश्वके इस अनुपम दृश्यको देखकर महाविश्व उद्भासित हो उठा है। मानो तुमने ही स्वर्गसे अमृतका पात्र ला मर्त्यलोकमें उँड़ेल दिया हो ॥१०॥

कार प्रेरणात तइ घुरिनि सपोत
　　सष्टिमीर क्षीरधारा
　　कार प्रेमे आत्महारा
यि गीतर तरंगत सुस तरंगित,
हृदय आप्लुत करे माधीन संगीत　　॥११॥

संगीतर सुधा धारा दिलि तइ बाकि,
　　आकाशत रामधेनु
　　रचिले मोतिमा तनु
देवपुरी एरि मइ आकाशो नतकी,
भरतत भरि दिले उवशी केतेकी　　॥१२॥

मेघकन्या सबे पिंधि तड़ितर हार,
　　गात मइ मोसाबरी
　　आरोवाल धनि धरि
आग्रहेरे दिछे लोक प्रीति उपहार,
कुंजे कुंजे धुरि कत करिछ विहार　　॥१३॥

आमोदि गन्धर्वपुर मगन कानन,
　　गालि दिलो विश्वजित
　　मदालसा प्रेम गीत
धातिलि प्रेमर हाट सोला मिघेतन
करे मत वसन्तत कुंज निकेतन　　॥१४॥

सोणकटि सोमारथे तइ धोरामणि
　　वनर कन्धिता रथ
　　दिउ प्रेम उपयाचि
धमन भयर सुर तुलापातन्त्रनि
कत काव्य कथारेइ हल्छे सुजनि　　॥१५॥

बताओ तो किसकी प्रेरणासे और किसके प्रेममें आत्मविभोर होकर तुमने गीत प्रारम्भ किए, जिसकी लहरोंमें मौन हो हृदय नाच उठा है ॥११॥

तुम्हारे संगीतने मानो अमृत की धारा ही बहा दी—जिसने आकाशके नीलें शरीरको भी इन्द्रधनुष के रूपमें प्रभावित किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि वसपुरीकी नर्तकी—उर्वशी केतकीके रूपमें मर्त्य-लोकमें आई है ॥१२॥

सभी मेघ कन्याओंने विद्युत्का हार पहनकर शरीरपर नीलाम्बर धारणकर बड़े आग्रहसे तुम्हें प्रीतिका उपहार दिया है। तुम कुञ्ज-कुञ्जमें कहाँ विहार कर रही हो? ॥१३॥

गन्धर्वपुर नन्दन काननको आलोड़ितकर विश्वजीत नवालसा के प्रेमगीतोंको क्या तुमने गाया है जिससे लीला निकेतन प्रेमका हाट बस गया है जहाँ वसंत कुञ्जको मधुवन बना रहा है ॥१४॥

स्वर्ण बीज अमलतासने मणिगुच्छ लेकर कनक कविताकी रचनाकर अयाचित प्रेम प्रदान किया है। शुभ्र पादपका पत्र मानो भूर्जपत्र है जो कितनी ही काव्य कथाओंसे सुन्दर बना हुआ है ॥१५॥

सुहतर काणे काणे कहुवार फुल
बताहत हासि आलि
दोले दोले दो बोलि
तुषार धवल कान्ति धरिछे विपुल ॥१६॥
येन सुरे तरंगिनी पुलके आकुल

सोणोवाली पहुणर सरियहु करा,
ऊपर माधुरी समा
हासि प्रेम ज्योतिकणा
उराइ पराग फाकु मनप्राण हरा ॥१७॥
रमक झमक हुल विश्व वसुन्धरा

शोभार अजन्त मुग्ध तरु-शोभासम,
ताते परि प्रिया तइ
तुमि सगोतर सय
सानि विभि रूपछटा धवली अजन, ॥१८॥
करिछे स्वर्गीय मुग्धे हृदय रंजन

पुरा आमररो तइ माडि लि चमक
लागिल वसन्त बा
उसह मासह गा
नव विभासय वसे करे थमथम ॥१९॥
समापिछ मागध्या वस्त पथिपक

निरोप डासल प्रिये परि रानि दिन
फुल कौंवरक सइ
कि घेमा छलिछ तइ
डेगा धनि सानि तोर बहुत हुल लोप, ॥२०॥
पुवे मेकि यानु तोर भालपोवा चिन

सात्विक किनारमें कासक फूलोंने हवामें झूम-झूमकर लहरोंके साथ लहराते हुए तुषार धवल कान्ति ग्रहण कर ली है मानो सुर तरंगिनी पुलकसे आकुल हुई है ॥१६॥

स्वर्णिम रंगके सरसोंके खेत-रूप माधुर्यमें प्रेमके ज्योतिकण मनप्राण आकर्षित करनेवाले परागके गुलाल उड़ा रहे हैं जिससे विश्व वसुंधरा अनुरंजित हो उठी है ॥१७॥

मजनकी तरह गोमाबाल भाभांबन वृक्षपर बैठकर संगीतकी लय गुंजाकर तुमने धमनी मजनके साथ रूपछटा तान दी है और एक स्वर्गीय हृदयसे सबका हृदय रंजित कर रही हो ॥१८॥

वृद्ध 'आजारका' भी तुमने चमका दिया है। वसंत पवनसे उसका हृदय भी आन्दोलित हुआ है। चमकते हुए नव किसलय वनने जगमगाते हुए कितने ही परिश्रान्त पथिकोंको उत्साहित किया है ॥१९॥

सिरीष (वृक्ष विशेष) की डालियोंमें बैठकर कलियोंके साथ रात दिन कौनसा खेल तुम खेल रही हो ? यौवनोन्मादसे तुम्हारा शरीर क्षीण हो गया है ? प्रिये क्या यही तुम्हारे प्रेमकी निशानी है ? ॥२०॥

स्पही, सेउती, जया, चम्पा, जुहि पाँति
फुलर फुर्केरोभोरे
साजि र स्पहेरे
फुलर धराइ बस धाने धाने पाति
जनाइछे व्याकुलता इंगितेरे माति ॥२१॥

बिमफुली भासतीर रूप चितोपन,
विचित्र बरण धरि
युकु चमि उवि करि
लइ गध उपहार कुङ्कुम चन्दन
याचिछे सादरी लोक प्रणय चुम्बन ॥२२॥

करवीर लगरतो पुसि विसि हो
फुले फुले फुलरापी
साजि विसे फुसबेलो
मौमिया माइन्टिकी लागे किया मो,
ममर मानाटि बाय पुराचि मेनो ॥२३॥

मालसुवा कान्तिमीर धुधुचनि धुरि
पाञ्जिसाहि पचिसाइ
धने मने चुमा पाइ
रूपलासी तरगत माधुरि साधुरि,
हेपाह पलाइ पोमे अमिया माधुरो ॥२४॥

प्रेयसी गुटिमाली महुवि अधोरा
प्रियतम जने आहि
बजाइ मोहन पाही
पियाब मिमन घूर्ने प्रणय मदिरा
पलाब पियाइ मोर हृदयपर पोहा ॥२५॥

रुपही, सेवन्ती जवा चम्पा, युति जाति (फूलोंके नाम) आदि फूल कुमारियोंने विविध वर्णोंसे सजधजकर जगह जगह नैवेद्य सजाये हैं और इशारेसे मुला-मुलाकर अपनी व्याकुलता सूचित की है ।।२१।।

सूर्यमुखी मालती अपने मनोहर रूप एवं विचित्र वर्ण वाले हृदयको खोलकर गन्ध रूपी कुंकुम-चन्दनका उपहार दे देकर तुमसे प्रणय चुम्बन माँग रही है ।।२२।।

करवीर नगरको भी तुमने तरंगित कर दिया। असंख्य फूलोंसे फूलरानीने अपनी फूलवेणी सजाई है। मौ-पिया ' बिटिमाको भी कौनसा मधुरस चाहिए ? उसके मनकी आशा क्या तुम पूरी नहीं करोगी ? ।।२३।।

कोमल दामिनीके वक्षको आवृतकर पद्मवासी तितली बार बार चूमती है। वह उसकी रूपराशीकी तरंगोंमें तरती हुई इच्छानुसार अमियमाधुरीका पान करती है ।।२४।।

ओ प्रियतमा गुटियामाली धीरज मत खोओ। प्रियतम आकर मोहन बंसी बजाएँगे और मिलन दूत आकर प्रणय-मदिरा पिलाएगा। तब सब प्रकारकी क्षुधा पिपासा और हृदयकी पीड़ा गायब हो जाएगी ।।२५।।

८ गिरिमल्लिका

अयि अवगुण्ठिता फुल्लशिखरिणी
रचि मणिकर्णिकार हरित मेखला,
भाढा शोभि शुभ्रवेशे, करि सुरभित
सौहित्यर तोरभूमि श्यामल वनानि।
नन्दनर रूप ज्योति परिमल सुधा,
करि आहरण विश्व विजयिनी रूपे
मोहिला नितम्ब वक्ष विलम प्रान्तर।
वनस्पति कुमारसे नव पल्लवेरे
जनाइछे हृदयर गुप्त सम्भाषण
स्लोभनभ्रा लतिकार कुञ्ज पल्लवत
उठिछे उर्मि येन प्रेमर तरंग
प्रिया, तुमि हासिला कि मोहन मदिरा
हाँहि कटाक्षर थि हाँहिल वने वने,
हरिता समत तरु तृण लतिकारो
माडिल चमक, ठाये ठाये थिये थिये
फुलिल रङेरे कुटज कुसुम राजि
द्रोणिजात शुभ्रकान्ति फुल्ल द्रोणिवले
प्रीतिभरा साजाञ्जलि यांचिछे सादरे।
वेतसर सवसर मुकुल पराग
उरि अहा पवनर मुकुल गलित
सुकोमल गौर तनु पेलाइछे धुर।
रंजित तुषार शुभ्र निमल गामत
सुरभि कुंकुम राग रक्त चन्दनर।
धवाद्रि शिखर यबे रचि संध्या राणे
गुंजेरे विश्राम लभे सांध्य समीरणि
विवुध वनिता सबे सिंचि समीरणु
रिठहि पियाइ मुक्ताहार आभरण

८ गिरिमल्लिका

अयि अनवगुण्ठिता फुल्ल शिखरिणी,
रञ्जित कर मणिकर्णिकामलसे हरित मेखलाको
शोभित हो रही हो शुभ्र वेशधारिणी, कर सुरभित
लौहित्यकी तीरभूमि-श्यामल वन।
मन्दनकी रूप-ज्योति सुधाके परिमलका
कर आहरण विश्वविजयिनी रूपमें
मोह लिया नितव देश निर्जन इस प्रान्तका।
वनस्पति द्रुमदल नव पल्लवोंसे
बतलाया हृदयका गुप्त सम्भाषण।
किंचित् विनम्र लतिका कुसुमके पल्लवोंसे
मानों उछल रही प्रेमकी तरगें।
प्रिये डाली है तुमने हँसी-कटाक्षकी?
कैसी मोहन मदिरा जिस हँसीसे वन वनकी
हरित क्षेत्रकी तरु-तृण-लताओंकी
चमक उठ गई ठौर-ठौरपर भाँति-भाँतिके
खिल रहे विविध रंग रंजित कुटज कुटमल समूह।
शोभीजात शुभ्रकान्ति प्रफुल्लित शोणीदलोंसे
प्रीतिपूर्ण मालांजलि करते अर्पण सादर।
देव वृक्षोंके सकल मुकुल परागने
अहा उड़ते हुए पवनकी मृदुल गतिसे
सुकोमल गौर तनुको किया है श्रान्त।
तुषार शुभ्र मसृण गालपर रंजित है
चन्दनका सुरभि कुंकुम राग रक्त
शेषाद्रि शिखर होता जब रंजित सन्ध्या रागसे
औ सुखसे विश्राम लेते सान्ध्य नभोमणि
विबुध वनिता सभी सिंच नभोरेणु
पहना देती मुक्ताहार आभरण

मसणि बिछिस गाव कोमल हातेरे
पुष्पतोया मालिनीर कोमल कलेरे ।
प्राणप्रिया, आजि मोर विजन कुसुम,
तुमिबाने समसासे हाँहिर तरग
व्यथारे उपजि परा आकुल प्राणल
पिया प्रेम मकरन्द अमृत परश
अकृत्रिम प्रणयर स्नेह आलिंगन
निष्प्रभ फुलनि मोर हृद ज्योतिमय ।

कि आज निज कोमल करोंसे सहलाकर शरीर
करती पुष्पतोया मालिनीका शीतल जल सिक्त करता है ?
प्राणप्रिये आज मेरे निर्जन इस कुंजमें
उल्लासके सयसे उठाओगी क्या हास्य तरंगें ?
व्यथासे विमूढ़ व्याकुल मेरे प्राणोंमें
भर दो अमृत स्पर्शमय प्रेम मकरन्द,
अकृत्रिम प्रणयके स्नेह-आलिंगनोंसे
प्रभाहीन उपवन मेरा हो उठे ज्योतिर्मय !

९. बैराग्यर कथा

भार्या पुत्र धन जन   बिसौं माइ बिसमन
मितिर कुटुम कौरो लाइ सगरीया,
आशा पखी उरि गल   शुण्य हिया परि रल
ससारत भाबि मइ अकलसरीया ॥१॥

सुखर ससार मोर   भबिरे परिस मोर
निजामसे बहि कस काहो हमुनिया,
सहाय सपबहीम   देखि सबे करे घिण
येथे देखे सेथे बोसे बाहर बसिया ॥२॥

मासागे ससार सुख   माचाओं मानह सुख
जीबनत पानों बहु बेजार आमनि,
घुन पेंच बिसासिता   सकलो लागिछे तिता
आजरि पेलासो माया मोहर बान्धनि ॥३॥

सकलोरे एरि आशा   अरण्यत ललों बास
मन गले अकलह फुरों पयणों बने बने
बिबिध बराह पहु   ठाये ठाये आछे बहु
सिहंतेह सगी मोर जीबने मरणे ॥४॥

खाप यदि बाघे घोड़े   परों यदि खासे ओड़े
यदिओबा आप किबा घटे अमगल
मबरों एकोके भय   आछे प्रभु दयामय
हुब तेवे आभितर आमयर थल ॥५॥

मोधन्त आतुर हले   अरण्यर फल मुले,
गुफाओं पेटर ज्वाला पलाये भागर,
मोरासर टासथमि   सेये गार आवरणि
तारेइ गुफाओं जार भासागे कापोर ॥६॥

१ वैराग्यकी कथा

भार्या पुत्र धन जन सभीको मैंने विसर्जित कर दिया। मेरे साथी मित्र आत्मीय स्वजन कोई नहीं हैं। आशा रूपी पक्षीके उड़ जानेसे हृदय शून्यवत् हो गया है अब संसारमें मैं केवल अकेला रह गया हूँ ।।१।।

मेरे सुखका संसार शीघ्रही नष्ट हो गया अब मैं किसी निर्जनमें बैठकर लम्बी आहें भरता हूँ। मुझ असहाय और सम्पत्ति हीनको देखकर सभी घृणा करते हैं जो देखता है वही मुझ रास्तेका पागल कहता है ।।२।।

मुझे संसारके सुख नहीं चाहिए मानवकी आकृतिसे भी दूर ही रहना चाहता हूँ। जीवनमें बहुतसी विरक्ति और उदासी ही मुझ मिली है। सांसारिक दाँव-पेंच विलासिता आदि सभी कटु लग रहे हैं माया मोहके बंधन मने समेट लिए ।।३।।

सब प्रकारकी आशाओं और अभिलाषाओंको छोड़कर मैंने अरण्य-निवास ग्रहण कर लिया है। यहाँ इच्छानुसार अकेला वन-वनमें घूमता रहता हूँ अनेकों प्रकारके पशु पक्षी यहाँ बहु तायतसे हैं वे ही अब मेरे लिए जन्म मरणके साथी है ।।४।।

अगर मुझे बाघ सिंह खा डालें या खाई खोहमें अगर मैं जा गिरूँ या और कोई अमंगल हो जाए, तो भी मुझे अब इनमेंसे किसीका भय नहीं लगता क्योंकि जो दयामय प्रभु हैं वे ही मुझ आश्रितके आश्रयदाता बन जाएँगे ।।५।।

क्षुधासे व्याकुल होनेपर अरण्यके कन्द मूल फलोंको खाकर उदरकी ज्वाला बुझाता हूँ। जीवास वृक्षकी छाल शरीरावरणका काम देती है और उसीसे शीत बिता देता हूँ मुझे वस्त्रोंकी आवश्यकता नहीं ।।६।।

आछे कत कुञ्जवन प्रकृतिर तपोवन
हियात नतुन भावे खेले कत ढौ,
कोमलता सरसता स्वरगर पवित्रता
आनन्द मूरति यत विराजे नितौ ॥७॥

तारे कत शोभा पाओं हृदयत शान्ति पाओं
विभूर महिमा गाओं पखीर सुरत,
तरगर लीला खेला अपूर्व मोहन मेला
ए मने बहि पाओं तटिनी तीरत ॥८॥

येति हेड़ुमि बसि विचित्र रहन हासि
नाहे नाहे याय मीत सागरत तल
फलर सुगंध बाही मलय समीरे आहि
सन्तापित प्राण मोर करे सुशीतल ॥९॥

हिंसा द्वेष प्रवञ्चना संसारर विडम्बना
लोभर बेहानि तात एको नाइकिया
मामाको सिबोर कथा नाइ भाव एको लेठा
सवा कये आमि मइ परम सुखीया ॥१०॥

चिचिना मसाटी बेहा बेहाइ ससार बेहा
विचारिब पावस मुक्तिर विधान,
पठर पातेरे सजा आठे पिटि पडा पना
ताते बहि पाम मइ नाय समिधान ॥११॥

———

प्रकृतिके तपोवन सदृश कुञ्जवन अन्यत्र कहाँ हैं? नवीन भावनाओंकी ऐसी हृदयमें तरंग कहाँ उठा करती हैं? कामलता सरसता स्वर्गीय पवित्रता आनन्दकी प्रतिमा यहाँ (प्रकृतिमें) नित्य विराजमान है ॥७॥

कितने चावस उन सबकी शोभा निरखकर मैं आन्तरिक शान्ति पाता हूँ। पक्षियोंके स्वरमें स्वर मिलाकर मैं विभुकी महिमाका गान करता हूँ। नदीके किनारे बैठकर मैं तरंगोंका लीलामय खेल देखता हूँ—जो एक अपूर्व मोहन मेलेके सदृश है ॥८॥

जब रक्तिम सूर्य विचित्र वर्णोंको डालत हुए धीरे धीरे नील (आकाश समुद्र) के नीचे चला जाता है तब मलय-वायुमें तरती हुई सुमनोंकी सुगंध आकर मेरे सतप्त प्राणोंको शीतल कर देती है ॥९॥

यहाँ हिंसा द्वेष प्रवंचना ससारकी विडम्बना लोभका व्यापार—कुछभी नहीं चलते। आज मैं उन विषयोंका चिन्तन नहीं करता। अब कोई जंजालही नहीं रह गया है। सच कहता हूँ आज मैं परम सुखी हूँ ॥१०॥

जिस दिन नश्वर शरीर संसार व्यापारको समाप्त कर मुक्तिका विधान पाना चाहेगा (उसदिनके लिए) वृक्षके पत्तोंसे बनी हुई टूटी फूटी हुई कुटियामें बैठकर मैं अन्तिम समाधान पा लूँगा ॥११॥

---

१० अन्तिम ज्योति

मरम भिखारी मइ विश्व माझारत
घुरिफिरिलों अन्तरर बान,
गरल उद्भव हल सिन्धु मंथनत,
अमृतर ना पालों सन्धान ।।१।।

उद्दाम वासना लइ स्वर्ण मृग धरि
संसारत भ्रमिलो दिनमान,
दुर्जय लालसा तेओ नुगुचिल मोर
व्यर्थ हल लक्ष्यभेदी बाण ।।२।।

मर्म्माहत व्यथाहत दुर्वह जीवन
आछे मोह आवरत पुरि
स्पन्दनत तन्त्रासुर दुखस चितर
जड़ताइ लिछे सबा हरि ।।३।।

व्यथार सहस्रजना व्यर्थतार ग्लानि
बुकु पोरा तपत उच्छ्वास,
कोनबा गुचाब मोर कोनबा गुचिब
आरम्भर स्वप्न उपन्यास ? ।।४।।

जीवनर धूसरता आर यामों यामों
अनन्तर अन्तिम बुकत,
परम आनन्द रूप ध्रुव ज्योतिकणा
पापाम न आर ति लोकत ? ।।५।

---

१० अन्तिम ज्योति



मैं प्रेमका भिखारी इस विश्व भंडारमें अन्तरंग समर्पणका सन्धान कर रहा था (परन्तु) सिंधु मन्थनमें गरलका उद्भव हुआ, अमृतका सन्धान नहीं मिला ॥१॥

उद्दाम वासना लिये स्वर्णमृगके पीछे दौड़ते हुए मैंने संसारमें न जाने कितने चक्कर लगाए, तो भी मेरी हृदय लालसा न मिटी लक्ष्यभेदी बाण व्यर्थ हो गया ॥२॥

मर्माहत व्याहत मेरा दुःसह जीवन मोहके आवर्तनमें घूम रहा है। धड़कनेवाले तन्द्रातुर दुर्बल शिरकी जड़ता उसकी चेतनाको हर रही है ॥३॥

व्यथाकी सहस्र ज्वालाएँ हैं व्यर्थताके कारण पैदा होनेवाली ग्लानि है एवं हृदय दग्धकारी तप्त उच्छ्वास है। इन्हें कौन दूर करेगा ? मेरे स्वप्नोंकी करुण कथाएँ कौन सुनेगा ? ॥४॥

अनन्तके अन्तिम कक्षमें जीवनका ध्रुवतारा अस्त होनेवाला है। उस लोकमें क्या मैं परम आनन्दरूप ध्रुव ज्योतिकणको प्राप्त न कर पाऊँगा ? ॥५॥



११ फुल शय्या

मारमो किमान हिया बेबमार बोझा
हे मोर हृदय देवता
करुण रोदन सुनि माफि दिसा किम्
प्राणर निविड़ नीरवता ?
॥१॥

मौवमर सघिखण विपमि बेसास
हिया धुमि उठे कोलाहल
मार दिय तिमत व्यथा रिक्त हृदयत
ढालि दिला तीव्र हलाहल ?
॥२॥

कोन काहानिये धुमि हरि निछा मोर
प्रीतिभरा प्रणयर सार
मन्तर्हांही रायपर विता मुरकुरा
कोन दिना मुमावनो मार ?
॥३॥

मानस्वर प्रणपाम शुम्य माजि मोर
कओपिन देवों हाहाकार
शावगिमर बहनत देवदार तरु
परि देह हल छारखार
॥४॥

मारिछिम शक्तिनेस ताहानि पिपात
पोषा माइ सि विप जामरि
बेबमार मत अस्त्र करिछा प्रयोग
मुठु पाति महछों सामरि
॥५॥

हिया मगा विपादर शिति अपूजले
पाहरिछों ससार मरम,
माराधास्त चित माजि उद्भासित करि
दिला शुभ्र पाना प्रियतम ?
॥६॥

११ फूल-सेज

हे मेरे हृदय देवता! और कितनी वेदनाओंका बोझ डालोगे ? मेरे प्राणोंकी निविड़ नीरवताको तुमने करुण रुदनसे क्यों भंग कर दिया ? ॥१॥

जीवनका सन्धिकाल इस सन्ध्यामें हृदयको पीड़ितकर कोलाहल मचा रहा है। तब इस हृदयमें शून्य और अधिक कटु व्यथाका तीव्र हलाहल क्यों डाल दिया ॥२॥

कितने दिनों पूर्व ही तुमने मेरे प्रीतिभरे प्रणयके मोदक (लड्डू) को हर लिया है! अन्तर दहनकारी रावणकी प्रज्वलित चिता और कितने दिनोंमें बुझेगी ? ॥३॥

पूरा भरा हुआ मेरा आनन्दका घट आज रिक्त हो गया है मैं अपने चारों ओर हाहाकार ही हाहाकार देखता हूँ मानों दावाग्निकी ज्वालामें विलास देखकर वृक्ष जलकर राख हो गया हो ॥४॥

(उनके द्वारा) मेरे वक्षमें जितने भी शक्तिशस्त्र मारे गए हैं आज तक उनका विष शान्त नहीं हो पाया है। फिर भी मुझपर बदलेके जिन अस्त्रोंका तुम प्रयोग कर रहे हो उन सबको मैं अपने वक्षपर सम्भाल रहा हूँ ॥५॥

हृदयभंग करनेवाले विषादके आँसुओंसे सिक्त होकर संसारका स्नेह विस्मृत हो चुका है। मेरे इस भाराक्रान्त चित्तको उद्वेलित कर हे प्रियतम तुमने क्या सुख पाया है ? ॥६॥

मरहिछे जीवनर कुसुम माधुरी
मोवारिसो आपर्शा पुराव,
माह्रिछे प्राणस आनि क्लान्ति अवसाद
दिया मोक शान्तिरे जुराव ।।७।।

यातनात निपीड़ित मोरे जीवनत
कढ़ियासो पल आवज्ञमा,
तोमारे विपुल दान युद्धत सावटि
अन्तिमत लभिम सान्त्वना ।।८।।

ज्वलिछे दूरत सच प्रमयर शिखा
धरिछे कि रुप चित्तोपम
सेये मोर कुसशय्या रचा अमसर
मम ताते अनन्त शयन ।।९।।

जीवनकी दुर्गम माधुरी मुरझाती आ रही है मैं आकांक्षाओंको पूर्ण नहीं कर पाया। प्राणोंमें आज क्लान्तिका अवसाद आ रहा है मुझे शान्तिसे विश्राम लेने दो ॥७॥

यातना पीड़ित सारे जीवनमें मैंने जितनी आवर्जनाएँ ढोई हैं उन्हें तुम्हारा ही विपुल दान समझकर वक्षमें धारण कर अन्तमें सान्त्वना प्राप्त कर लूँगा ॥८॥

सुदूर प्रलयकी शिखा प्रज्वलित हो कैसा अपूर्व रूप धारण कर रही है! वही मेरी गन्ध-कमलकी फूलसेज बन मैं उसीमें अनन्त शयन ले लूँगा ॥९॥

---

१२ केतेकी !

[प्रथम सरग]

कर परा लइ आहिलि सोनाइ
कोन बिसे माथ उरि,
किय वा फुरिछ धुर धुरनित
अकमइ फुरि फुरि ?
॥१॥

लोकालोक एरि मिलान भूमित
मुगुआ मायारे तइ
कि मात मातिछ किहर आसात
मुगुओ बिहगी मइ
॥२॥

बेयर कुसम मातिछ कि घम
कामनो बिसाइ दिवि
निम्वा इ बेहार माल परगुथिनि
कोन बनलइ निवि ?
॥३॥

असंख्य गिरिर शिखरे शिखरे
थर बिममोया सुर,
कतिमाया गइ तटिमी तीरर
निस्तब्धता कर दूर
॥४॥

बिजन बनत प्रान्तर भूमित
ममत कि मद पूर
कत एरि यइ पराग मणिक
अकन अगम पुर ?
॥५॥

प्रथम सभिठ मानव अज्ञात
आछे कि सुन्दर ठाइ
श्रद्धा, शान्ति दया देवमाला सबे
बिहरिछे सततवाप
॥६॥

१२ केतेकी!

[प्रथम तरंग]

अरी! कहाँसे आई हो तुम और किस दिशाको उड़ती चली जाओगी? अकेली ही दूर-दूर तक क्यों घूम फिर रही हो? ॥१॥

मोकामाक छोड़कर इस अनजान भूमिपर किसकी आशामें अनजान भाषामें क्या कह रही हो हे विहगी! मैं समझ नहीं पाता ॥२॥

क्या देव-कुसुम किसी निधिका किसी विशेषका बाँटने आ गई? अथवा इस देशकी उत्तम वस्तुका किसी दूसरे देशमें ले जाओगी? ॥३॥

तुम कभी असम्य गिरिके शिखरोंपर मधुर तान छेड़ती हो कभी नदीके तीर आकर उसकी नीरवता दूर करती हो ॥४॥

मनमें क्या लेकर विजन वन प्रान्तरकी भूमिमें तुम घूमती रहती हो और अपने जीवन-माणिकका सुमन कहाँ रख छोड़ा है? ॥५॥

मालूम उस अनात सुन्दर स्थानमें तुम्हारा जन्म हुआ है जहाँ श्रद्धा शान्ति दया आदि सती देवबालाएँ सदा विहार करती हैं ॥६॥

दुष्ट व्याधि तात मोहर बागुरा
पातिछे सुन्दरकइ,
किन्त पखी तइ आग पीछ नानि
फुरिबि सतक हइ ॥१४॥

माहिछ बिहगी आलचि ममत
चिबा काम पाम धुलि,
मोमर देहानि आछे आप बहु
याब तोर मन भुलि ॥१५॥

इपिने सिपिने डिङि मेलि मेलि
काक चाव घुमिघुमि,
कार बिरहत बिरहिनी तोर
गइछे हृदय घमि ? ॥१६॥

कारमी बातरि आनिछ साबरी
कारनो पातिबि कृपा
हृदय पमोचा भात धुमि तोर
हियात लागिछे थेपा ॥१७॥

बिरह बातरि आनिछहे यदि
तोर कृपा गुञ्जनाबि,
मिलन बातरि बानिछहे यदि
मावमि सुरत गाबि ॥१८॥

माहियेइ तइ घुमालि सागर
घुमालि पबत बन
अमृत बरषा एयारि मातने
घुमालि ससारखन ॥१९॥

बनप्राणीहीन मह प्रान्तरत
गाइ सजीबनो गान
राजाइ धुमिलि अमर भूमित
अपन्प मधुपान ॥२०॥

यहाँ दुष्ट शिकारी मोह जाल सजाए बैठे हैं। परन्तु हे विहगी, तुम आगा पीछा सोचकर सतर्क होकर घूमना ॥१४॥

हे विहगिनी क्या तुम यहाँ कुछ खाने पीनेकी आशा लेकर आई हो? यहाँ लोगके बहुतसे व्यापार चलते हैं जिनमें तुम्हारा मन भूल जाएगा ॥१५॥

इधर उधर सिर उठा उठाकर तुम बार-बार किसे देखती हो किसके विरहसे अरी विहगी तुम्हारा हृदय विगलित हो रहा है? ॥१६।

अरी प्रिये, तुम किसका संदेश ला रही हो? किसकी गाथा सुनाओगी? अन्तर विचलित करनेवाली तुम्हारी बोली सुनकर हृदयमें बड़ी वेदना हो रही है ॥१७॥

यदि तुम विरहका संदेश लाई हो तो अपनी बात न सुनाओ और यदि मिलनका संदेश लाई हो तो मधुर स्वरसे गाओ ॥१८॥

तुमने आते ही समुद्रको मोह लिया पर्वतों और वनोंको भ्रमित कर लिया तुमने अपनी पीयूषवर्षी केवल थोड़ी सी बोलीसे सारे संसारको मोह लिया है ॥१९॥

तुमने जनहीन मरुप्रान्तमें सजीवन संचार करनेवाले गीत गाकर ऊसर भूमिमें भी अपूर्व मरुद्यानकी रचना कर डाली ॥२०॥

बीणार झकार मुरलीर ध्वनि
तटिनीर कुलु तान,
तोरेइ सुरत बाजे सिबोरत
बिमल प्रेमर गान ॥२८॥

तोरेइ निबिना जीव आछे बँचि
आछे मरमर माया,
कोमल हाँहिटि कटाक्ष चाबनि
लये निराधार आशा ॥२९॥

प्रेमर शिकनि सिकनि मर्त्यक
पियासि अमृत बिन्दु,
तोमके आहि सइ तरार माजत
हाँहिछे बिमल इन्दु ॥३०॥



वीणाकी झंकार, मुरलीकी ध्वनि नदीका कल-कल नाद—समीमें तुम्हारे ही स्वरोंसे निर्मल प्रेमका संगीत बजता है ॥२८॥

तुम जैसे जीव वर्तमान हैं इसीलिए प्रेमकी भाषा भी बनी हुई है। तुम्हारी कटाक्ष दृष्टि और कोमल हँसी ही निराशोंकी आशा है ॥२९॥

तुमने मर्त्योंको प्रेमकी शिक्षा दी है, तुमने ही अमृत बिन्दुका पान कराया है। तुम्हारा ही आदर्श लेकर तारोंके बीच विमल चन्द्रमा हँसा करता है ॥३०॥

बीणार झंकार सुरमोर ध्वनि
सटिनीर झुनु ताल,
तोरेइ सुरत बाजे सिकोरत
बिमल प्रेमर गान ॥२८॥

तोरेइ सिजिना बीच भाछे देखि
माछे मरमर माया,
कोमल हाँहिटि कटाक्ष चाहनि
तवे निराशार आशा ॥२९॥

प्रेमर झिकमि झिकमि मरमक
पियासि अमृत बिन्दु,
तोमे माँहि सह तरार माजत
हाँहिछे बिमल इन्दु ॥३०॥

वीणाकी झंकार, मुरलीकी ध्वनि मदोंका कल-कल नाद—सभीमें तुम्हारे ही स्वरासे निर्मल प्रेमका संगीत बजता है ॥२८॥

तुम-जैसे जीव वर्तमान हैं इसीलिए प्रेमकी भाषा भी बनी हुई है। तुम्हारी कटाक्ष दृष्टि और कोमल हँसी ही निराशोंकी आशा है ॥२९॥

तुमने मर्त्योंको प्रेमकी शिक्षा दी है तुमने ही अमृत बिन्दुका पान कराया है। तुम्हारा ही आदर्श लकर तारोंके बीच विमल चन्द्रमा हँसा करता है ॥३०॥
